

बिहार राज्य और अन्य

बनाम

परियोजना उच्च विद्या, शिक्षा संघ और अन्य

3 जनवरी, 2006

[एस. बी. सिन्हा और पी. पी. नौलेकर, न्यायमूर्ति गण]

भारत का संविधान, 1950:

अनुच्छेद 14, 15(3), 16, 19(1)(जी), 19(6) और 309 - बिहार राज्य में 'परियोजना विद्यालय' - स्थापना, पहचान और मान्यता - राज्य का इरादा था कि प्रत्येक प्रखंड के शैक्षिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में कम से कम बालिकाओं का एक उच्च विद्यालय स्थापित किया जाए - कुछ विद्यालय स्थापित, पहचाने और मान्यता प्राप्त किए गए - इन विद्यालयों को राष्ट्रीयकृत विद्यालय के रूप में नहीं माना जाना था - ऐसे विद्यालयों के शिक्षकों द्वारा वेतन भुगतान और उनकी सेवाओं के नियमितीकरण का दावा - इन विद्यालयों की संख्या और शिक्षकों की संख्या विवादित - अभिनिर्धारित: शिक्षा मानव विकास का एक हिस्सा है और यह एक मानवाधिकार है - महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष ध्यान आवश्यक है और इसलिए अनुच्छेद 15(3) के तहत सुरक्षा आधारित भेदभाव और सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया - राज्य सरकार एक समिति का गठन करेगी ताकि मान्यता, ऐसे विद्यालयों की वास्तविक संख्या, शिक्षकों की शैक्षिक योग्यता और जहां अस्थायी शिक्षकों की नियुक्ति हुई है, वहां शिक्षकों की नियुक्ति से संबंधित दावों पर विचार किया जा सके।

अनुच्छेद 162, 166 और 300-ए:

शैक्षिक संस्थाएँ - राज्य सरकार द्वारा "अधिग्रहण" - बिहार राज्य में उच्च विद्यालयों की पहचान 'परियोजना विद्यालयों' के रूप में - मान्यता - ऐसे विद्यालयों को राष्ट्रीयकृत विद्यालय के रूप में नहीं माना जाएगा - ऐसे विद्यालयों की संपत्तियों और प्रबंधन के साथ-साथ शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारी को अधिग्रहण करने के लिए कोई अधिनियम पारित नहीं किया गया और न ही कोई नियम बनाए गए - अभिनिर्धारित: इस वाद में "अधिग्रहण" शब्द का उपयोग ढीले तौर पर किया गया है - राज्य सरकार के एक अधिकारी द्वारा जारी परिपत्र, यदि अनुच्छेद 162 और 166 की अनिवार्य धारा का पालन नहीं करता है,

तो इसे राज्य के निर्णय के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता - 'सर्वोपरि अधिकार का सिद्धांत' लागू होगा।

शिक्षा/शैक्षणिक संस्थान:

विद्यालयों की 'मान्यता' और शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं का 'नियमितीकरण' - संस्थानों को मान्यता देने के संबंध में दावों पर विचार करने के लिए निर्देश दिए गए।

प्रशासनिक कानून:

समानुपाती विबंध - अभिनिर्धारित: यदि किसी संवैधानिक प्रावधान के कारण राज्य की कार्यवाही का समर्थन नहीं किया जा सकता है या राज्य किसी नीतिगत निर्णय को वापस लेने या संशोधित करने का इरादा रखता है, तो विबंध का सिद्धांत लागू नहीं होगा - वैध अपेक्षा।

शब्द और वाक्यांश:

शब्द 'नियमितीकरण' और 'अधिग्रहण' - शैक्षिक संस्थानों की सेवाओं के नियमितीकरण के संदर्भ में इनके अर्थ।

बिहार राज्य के तुलनात्मक रूप से शैक्षिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में अशिक्षा से निपटने के उद्देश्य से, राज्य सरकार ने दिनांक 27.05.1981 को परिपत्र संख्या 1115 जारी किया, जिसमें एक नीतिगत निर्णय निर्धारित किया गया कि छठे पंचवर्षीय योजना अवधि के शेष वर्षों, अर्थात् 1981-82 से 1984-85 के दौरान, राज्य प्रत्येक प्रखंड में चार उच्च विद्यालय स्थापित करने का लक्ष्य प्राप्त करेगा, जिनमें से एक बालिकाओं का उच्च विद्यालय होगा। ऐसे विद्यालयों को 'परियोजना विद्यालय' के रूप में जाना जाएगा। वर्ष 1981-82 के दौरान कुछ विद्यालय स्थापित किए गए। लक्ष्य प्राप्त करने के लिए, मौजूदा विद्यालयों की पहचान के लिए एक तीन-सदस्यीय समिति का गठन किया गया। वर्ष 1985 में कुछ विद्यालयों को मान्यता दी गई। प्रबंधन उद्देश्यों के लिए इन विद्यालयों को राष्ट्रीयकृत विद्यालयों की श्रेणी में नहीं रखा जाना था और इन विद्यालयों के प्रबंधन के नियंत्रण को सरकार द्वारा घोषित करने हेतु एक औपचारिक अधिसूचना जारी की जानी थी।

वर्ष 1992 से 1997 के बीच, उच्च न्यायालय में कई विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ दायर की गईं, जिनमें अन्य बातों के अलावा, 300 विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों के वेतन भुगतान के निर्देश मांगे गए, जिन्हें कथित रूप से परियोजना विद्यालय के रूप में चयनित किया गया था। अंततः इस मामले की सुनवाई उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा की गई, जिसने यह पाया कि 300 परियोजना विद्यालय की स्थापना/चयन को लेकर कोई विवाद नहीं बचा है, और प्रत्येक विद्यालय में शिक्षकों की संख्या 9 होगी। उच्च न्यायालय ने शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की आयु और शैक्षिक योग्यता के संबंध में भी टिप्पणियाँ कीं। वर्तमान अपीलें राज्य तथा शिक्षकों की ओर से दायर की गईं, उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय को चुनौती देने के लिए।

उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष राज्य का रुख यह था कि तीन-सदस्यीय समिति विद्यालयों की पहचान के उद्देश्य से नियुक्त की गई थी, जो विभिन्न प्रखंडों में स्थित थे, उन्हें परियोजना विद्यालय के रूप में चिन्हित करने के लिए। पक्षकारों के बीच विवाद निम्नलिखित प्रश्नों के संबंध में था: क्या विद्यालयों को मान्यता दी जानी थी या विद्यालयों के साथ उनका प्रबंधन भी राज्य द्वारा अधिग्रहित किया गया था; क्या विद्यालयों का प्रबंधन निजी हाथों में बना रहा और राज्य केवल शिक्षकों के वेतन का भुगतान करने का इरादा रखता था; क्या पूर्व विद्यालयों की प्रबंधक समितियों की संपत्तियाँ बिहार राज्य में हस्तांतरित हुईं; और परियोजना विद्यालयों में 5 या 9 पद मान्यता प्राप्त थे।

अपीलों का निस्तारण करते हुए, न्यायालय

निर्णय:1.1. शिक्षा प्रदान करना राज्य का मुख्य कर्तव्य है। यद्यपि उच्च विद्यालयों की स्थापना संवैधानिक कार्य नहीं हो सकती, इस अर्थ में कि 14 वर्ष से अधिक आयु के भारतीय नागरिकों को इसके संबंध में कोई मौलिक अधिकार नहीं हो सकता, फिर भी शिक्षा मानव विकास का हिस्सा होने के नाते निर्विवाद रूप से एक मानवाधिकार है। संविधान के ढांचे में समानता के प्रावधान को शामिल करते समय संवैधानिक रचनाकारों के मन में यह था कि महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष व्यवहार आवश्यक है और इसी दृष्टिकोण के तहत अनुच्छेद 15(3) के प्रावधानों के अनुसार सुरक्षा आधारित भेदभाव और सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया।[41-ए-सी]

1.2. बिहार राज्य ने इस योजना को संवैधानिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए तैयार किया। हालांकि, राज्य द्वारा अपनी स्थिति बदलने की प्रवृत्ति स्पष्ट है। जहां वर्ष 1981 में

तैयार मुख्य योजना के अनुसार स्वयं विद्यालय स्थापित किए जाने थे और वह भी उस समय के बिहार राज्य के सबसे पिछड़े क्षेत्रों, अर्थात् छोटानागपुर और संथाल परगना में, वहाँ के तथ्य स्पष्ट रूप से दिखाते हैं कि जिस मुख्य उद्देश्य के लिए उक्त योजना तैयार की गई थी, उससे काफी विचलन हो गया। इसके बजाय और छोटानागपुर एवं संथाल परगना क्षेत्रों में अधिक से अधिक बालिकाओं के विद्यालय स्थापित करने के स्थान पर, राज्य के अन्य भागों में भी अधिक से अधिक विद्यालय स्थापित करने का प्रयास किया गया। इसके अतिरिक्त, जहां योजना में प्रत्येक पहचाने गए ब्लॉक में कम से कम एक बालिकाओं का उच्च विद्यालय स्थापित करके महिलाओं में शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया गया था, वहाँ सभी प्रयत्नों और उद्देश्य के अनुसार लड़कों के उच्च विद्यालयों की ओर बदलाव किया गया।[41- सी-डी; 43-डी।

1.3. राज्य योजना को लागू करने में एक निश्चित रुख बनाए रखने में असफल रहा और/या उपेक्षा की। हालांकि उसने स्पष्ट रुख अपनाया कि परियोजना विद्यालय राष्ट्रीयकृत विद्यालयों या सरकारी विद्यालयों की श्रेणी में नहीं होंगे, परंतु निजी विद्यालयों को मान्यता देने के लिए चयन और पहचान करते समय भवन निर्माण के लिए भी धन आवंटित किया गया। राज्य सरकार ने विभिन्न समयों पर विभिन्न रुख अपनाए। यह स्पष्ट नहीं है कि राज्य ने स्वयं कितने विद्यालयों का निर्माण किया, कितने विद्यालयों का निर्माण सार्वजनिक सहायता से किया गया, और/या कितने विद्यालयों की पहचान की गई और उन्हें मान्यता/अधिग्रहण किए जाने का प्रस्ताव रखा गया[41- एफ, एच; 42-ए]

2.1. जहां तक परियोजना विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के अधिग्रहण और उनके सेवाओं के नियमितीकरण के दावे का सवाल है, इसे इस दृष्टि से देखा जाना चाहिए कि 'नियमितीकरण' शब्द का निश्चित अर्थ है। सेवाओं का नियमितीकरण किसी विधायी अधिनियम के तहत होना चाहिए या, यदि कोई विधान नहीं है, तो संविधान के अनुच्छेद 309 में संलग्न प्रावधान के अनुसार बनाए गए नियमों के तहत होना चाहिए। इसके अलावा, यदि राज्य की ओर से विद्यालयों के अधिग्रहण के संबंध में कोई नीतिगत निर्णय नहीं लिया गया है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं को विद्यालयों की संपत्तियों के साथ लिया गया या नहीं, ताकि न्यायालय यह निश्चित निष्कर्ष निकाल सके कि सभी दृष्टियों और उद्देश्यों के लिए शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारी राज्य के कर्मचारी बन गए हैं।[44- बी; 44-एफ]

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम नीरज अवस्थी, (2005) 10 स्केल 286, पर अवलम्बन किया।

2.2. यह कहना एक बात है कि विद्यालय का प्रबंधन शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के साथ अधिग्रहण कर लिया गया है, और यह कहना दूसरी बात है कि राज्य ने विद्यालयों को मान्यता दी है और ऐसे शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों को अपने स्वयं के शिक्षकों के समान वेतन और भत्ते का भुगतान करने का दायित्व है। विद्यालयों के राष्ट्रीयकरण के मामले में, इसके अलावा, अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, शिक्षकों की सेवाओं को अधिग्रहित करने के लिए शैक्षिक योग्यता तथा अन्य योग्यताओं को निर्धारित किया जाता। ऐसे किसी विधान के अभाव में, यह अपेक्षित था कि राज्य नीति निर्णय या दिशानिर्देशों के माध्यम से इस प्रकार के मानदंड स्पष्ट रूप से निर्धारित करे, न केवल शिक्षकों को यह बताने के लिए कि वे किस स्थिति में हैं, बल्कि यह निर्धारित करने के लिए कि विद्यालयों में ऐसे शिक्षक उपलब्ध हैं जो राज्य द्वारा भुगतान किए जाने वाले वेतन और अन्य भत्तों के पात्र हैं। यदि नए विद्यालय स्थापित किए गए, तो निर्विवाद रूप से उसके शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों को विद्यालय सेवा बोर्ड के माध्यम से मौजूदा नियमों और संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के अनुरूप नियुक्त किया जाना आवश्यक था। अतः, यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें नियमितीकरण की संकल्पना लागू की जा सकती थी।[44-जी-एच; 45-ए-बी]

2.3. जिन विद्यालयों को सार्वजनिक भागीदारी के माध्यम से स्थापित किया गया कहा गया, उस मामले में परिपत्र केवल यह उल्लेख करता है कि ऐसे विद्यालय सार्वजनिक भागीदारी के माध्यम से भी स्थापित किए जा सकते हैं, लेकिन यह नहीं बताता कि जनता के सदस्यों की क्या भूमिकाएँ होंगी। इसके अलावा, यह स्पष्ट है कि अभी भी बड़ी संख्या में विद्यालयों की पहचान करनी बाकी थी या उनकी पहचान ज्ञात नहीं थी, या भवन का निर्माण अभी शेष था। उस स्थिति में, जहाँ भूमि की पहचान ज्ञात न हो या जहाँ कोई भवन मौजूद न हो, वहाँ विद्यालय को अधिग्रहित किया गया कहना उचित नहीं होगा।[45- ई; 46-ए]

3.1. शब्द 'अधिग्रहण' का अर्थ यह होगा कि सरकार ने विद्यालयों की संपत्तियों एवं परिसंपत्तियों को, शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं सहित, अपने अधिकार में लेने का विचार किया था। राज्य की नीति-निर्णय की पृष्ठभूमि में विद्यालयों का अधिग्रहण शब्दावली में विद्यालयों के प्रबंधन के पूर्ण अधिग्रहण का अभिप्राय प्रकट नहीं होता। प्रथम अर्थ में, ऐसे विद्यालयों का अधिग्रहण संविधान के अनुच्छेद 300-ए का उल्लंघन होगा। किसी संस्था का प्रबंधन करना भी एक प्रकार का संपत्ति-अधिकार है। अनुच्छेद 300-ए में 'सर्वोपरि

अधिकार का सिद्धांत' निहित है, जिसमें दो तत्व सम्मिलित हैं—(i) लोकहित में संपत्ति का अधिग्रहण; तथा (ii) उसके लिए यथोचित मुआवजे का भुगतान। [49-एफ]

जिलुभाई नानभाई खाचर और अन्य बनाम गुजरात राज्य और एक अन्य, (1995) 1 पूरक 596, पर अवलम्बन किया।

बिशंभर दयाल चंद्र मोहन और अन्य आदि बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य आदि, [1982] 1 एस. सी. सी. 39, संदर्भित।

3.2. शैक्षणिक संस्था की स्थापना तथा उसका प्रबंधन, संविधान के अनुच्छेद 19(1) (जी) में निहित व्यवसाय के अधिकार का एक अभिन्न अंग है, जो एक मौलिक अधिकार के रूप में संरक्षित है। किसी नागरिक को इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता, सिवाय विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार। अनुच्छेद 19 के खंड (6) के उद्देश्य की पूर्ति किसी भी प्रकार से केवल एक परिपत्र जारी करके या अनुच्छेद 162 के अंतर्गत नीति-निर्णय के माध्यम से या अन्य किसी प्रकार से नहीं की जा सकती। यह सर्वविदित है कि ऐसी विधि अनिवार्य रूप से विधायिका द्वारा अधिनियमित होनी चाहिए। [50- एच; 51-ए-बी]

टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य [2002] 8 एस. सी. सी. 481 और *मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य बनाम ठाकुर भरत सिंह, ए.आई.आर.* (1967) एस. सी. 1170 [1967] 2 एस. सी. आर. 454 पर अवलम्बन किया।

राय साहब राम जवाया कपूर और अन्य बनाम पंजाब राज्य, [1955] ए 2 एस.सी.आर. 225, संदर्भित।

3.3. किसी प्राधिकरण द्वारा निजी व्यक्तियों को लिखा गया पत्र किसी वैध अपेक्षा को जन्म नहीं दे सकता। वर्तमान मामले में 'अधिग्रहण' शब्द का प्रयोग अनौपचारिक तौर पर किया गया है। यह सुव्यवस्थित विधि है कि राज्य के किसी अधिकारी द्वारा जारी किया गया परिपत्र—यदि वह संविधान के अनुच्छेद 162 और 166 में निहित अनिवार्य प्रावधानों का पालन किए बिना जारी हुआ हो—तो उसे राज्य का निर्णय नहीं माना जा सकता। [52- सी-डी]

श्री द्वारका नाथ तिवारी और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, ए.आई.आर. (1959) एस. सी. 249 और *भारत संघ और अन्य बनाम मेसर्स ग्राफिक इंडस्ट्रीज कं. और अन्य*, जे. टी. (1994) 5 एस. सी. 237 पर अवलम्बन किया।

3.4. यदि परिपत्र-पत्र संविधान के अनुच्छेद 162 की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता, तो वैध अधिग्रहण का प्रश्न—जिस अर्थ में विद्यालय की संपत्तियाँ और/या प्रबंधन बिहार राज्य में निहित हो जाए—उत्पन्न ही नहीं होता। इसके अतिरिक्त, जिला शिक्षा पदाधिकारी को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह प्रबंधन एवं नियंत्रण के औपचारिक अधिग्रहण तथा उसे राज्य सरकार में निहित करने संबंधी अधिसूचना जारी कर सके। किसी भी स्थिति में, यदि शिक्षकों की नियुक्ति परिपत्र में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार की जानी आवश्यक थी, तो विद्यालय के प्रबंधन का अधिग्रहण—वहाँ पहले से कार्यरत शिक्षण तथा गैर-शिक्षण कर्मचारियों सहित—किया ही नहीं जा सकता था। [52- ई-एफ]

4. जहाँ तक विद्यालयों की संख्या का संबंध है, विभिन्न दस्तावेज़ तथा राज्य की ओर से दायर शपथ पत्र स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि राज्य द्वारा स्थापित और संचालित विद्यालयों के अतिरिक्त ऐसे कई अन्य विद्यालय भी थे जिनकी पहचान को लेकर विवाद था। दोनों पक्षों द्वारा उल्लेखित विद्यालयों की संख्या पूर्णतः सही न भी हो, तथापि यह तथ्य निर्विवाद है कि स्वयं राज्य के प्राधिकारियों द्वारा मंत्रिमंडल के समक्ष यह प्रतिवेदन किया गया था कि 300 विद्यालय अस्तित्व में हैं। इसी आधार पर मंत्रिमंडल ने अतिरिक्त 1200 पदों को स्वीकृति प्रदान की। [46- सी-ई]

5. जहाँ तक परियोजना विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या का प्रश्न है, यह स्पष्ट है कि राज्य द्वारा स्थापित विद्यालयों हेतु 9 पद स्वीकृत थे, जबकि तीन-सदस्यीय समिति द्वारा मान्यता / अधिग्रहण हेतु चयनित विद्यालयों में केवल 5 पद स्वीकृत किए गए थे। राज्य को निस्संदेह यह अधिकार प्राप्त है कि वह शिक्षकों की योग्यता, आवश्यक पदों की संख्या तथा ऐसे शिक्षकों की आयु-सीमा निर्धारित करे। स्वयं मंत्रिमंडल ने यह स्वीकार किया कि जैसे राज्य द्वारा संचालित अन्य विद्यालयों में 9 शिक्षक अनिवार्य होते हैं, उसी प्रकार परियोजना विद्यालयों में भी कम-से-कम 9 शिक्षकों का होना आवश्यक है। ऐसे विद्यालयों के लिए शिक्षकों की संख्या न केवल स्वीकृत की गई, बल्कि यह स्वीकृति पश्चगामी प्रभाव एवं पूर्ववर्ती संचालन के साथ प्रदान की गई। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक धन-आवंटन भी किया गया। अतः, उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि राज्य प्रत्येक विद्यालय में कम-से-कम 9 शिक्षकों को मान्यता देने के लिए बाध्य है, विस्तृत विचार का विषय नहीं रह जाता, क्योंकि राज्य सरकार ने अब 4 अतिरिक्त पदों को पश्चगामी प्रभाव से स्वीकृत कर दिया है। [47- बी-ई; जी-एच; 48 सी]

6. जहां तक शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की न्यूनतम आयु का संबंध है, निर्विवाद रूप से 18 वर्ष होनी चाहिए।[55- बी]

7. जहाँ तक शिक्षण कर्मचारी की शैक्षणिक योग्यता का संबंध है, यह देखते हुए कि सीमित संख्या में शिक्षकों की नियुक्ति गाँवों में साक्षरता फैलाने के संवैधानिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए, विशेषकर बालिकाओं के बीच, की जानी थी, इसलिए ज़िला स्कूलों या शहरी क्षेत्रों में स्थापित सरकारी विद्यालयों में अपनाए गए मानकों पर कठोरता से जोर नहीं दिया जा सकता, जैसा कि उच्च न्यायालय ने भी कहा है; किन्तु यह ध्यान में रखते हुए कि यह मूलतः एक सरकारी कार्य है, यह प्रश्न कि क्या बी.टी. प्रशिक्षण प्राप्त या शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित कुछ शिक्षकों को उक्त परियोजना विद्यालयों में जारी रहने दिया जाए या नहीं, राज्य पर छोड़ा जाता है, जिसके लिए विधि के अनुसार निर्णय लिया जा सकता है। [55-सी]

8.1. भले ही विद्यालयों की संख्या के संबंध में कोई विवाद न हो, राज्य द्वारा लिए गए रुख को देखते हुए और विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अभिलेखों से यह प्रतीत होता है कि विद्यालय की मान्यता, यदि कोई हो, तो गलत तरीके से कुछ विद्यालयों को दी गई थी जहां इमारतें भी पूरी नहीं हुई थीं या चयन की प्रक्रिया भी समाप्त नहीं हुई थी, राज्य के लिए इस मामले में आगे देखना आवश्यक हो सकता है, और इस सवाल पर नए सिरे से विचार किया जाना चाहिए कि कितने विद्यालय मानदंडों को पूरा करते हैं। इसके अलावा इस बात की जांच करना आवश्यक है कि उक्त उद्देश्य के लिए नियुक्त शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारी राज्य के नीतिगत निर्णय के संदर्भ में मानदंडों को पूरा करते हैं या नहीं। अनुमति प्राप्त करने के उद्देश्य से अन्य प्रासंगिक कानूनों के तहत निर्धारित उनकी योग्यताओं की भी जांच की जानी चाहिए। [52- जी-एच; 53-ए]

8.2. यह नहीं कहा जा सकता कि न्यायसंगत विबंध का सिद्धांत बिहार राज्य के विरुद्ध लागू होगा। यह सर्वविदित है कि जब विवाद संविधान के प्रावधानों या किसी विधिक अधिनियम से संबंधित हो, तब विबंध का नियम लागू नहीं होता। राज्य को यह अधिकार विधिसम्मत रूप से प्राप्त है कि वह यह प्रश्न उठा सके कि उसकी कोई कार्रवाई भारत के संवैधानिक ढाँचे के अंतर्गत अवैध है। यदि किसी संवैधानिक प्रावधान के कारण राज्य की कार्रवाई का समर्थन नहीं किया जा सकता, या राज्य किसी नीति-निर्णय को वापस लेने या संशोधित करने का निर्णय लेता है, तो उसके विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। [53- बी-सी]

8.3. हालाँकि, यह कहना एक बात है कि इस तरह की कार्रवाई का निर्णय एक नागरिक के मौलिक अधिकारों को ध्यान में रखते हुए किया जाना आवश्यक है, लेकिन यह कहना दूसरी बात है कि विबंध के नियम को लागू करके, राज्य को उक्त प्रश्न उठाने की अनुमति नहीं होगी। जहाँ तक आक्षेपित परिपत्र दिनांक 18.02.1989 का संबंध है, राज्य को संवैधानिक ढांचे के संदर्भ में इसकी वैधता का समर्थन करने का अधिकार है। [53-डी]

8.4. यह स्पष्ट नहीं है कि सभी सही तथ्यों को मंत्रिमंडल के समक्ष रखा गया था या नहीं, विशेषतः इस तथ्य के प्रकाश में कि झारखंड राज्य के गठन के पश्चात् छोटानागपुर और संथाल परगना क्षेत्रों में स्थापित अनेक विद्यालय अब झारखंड राज्य में स्थित हैं; तथा यह भी स्पष्ट नहीं है कि तीन-सदस्यीय समिति द्वारा पहचाने गए और राज्य द्वारा स्वीकृत विद्यालयों के अतिरिक्त, शेष विद्यालयों की मान्यता अथवा अमान्यता के विषय में सक्षम प्राधिकारी द्वारा कोई अंतिम निर्णय लिया गया था या नहीं। अतः, इस उद्देश्य के लिए एक समिति का गठन किया जाना आवश्यक है। इस कारण बिहार राज्य के मुख्य सचिव से अनुरोध किया जाता है कि वे दो अधिकारियों तथा एक प्रतिष्ठित शिक्षाविद् और/या एक सेवानिवृत्त न्यायिक अधिकारी को सम्मिलित करते हुए एक समिति का गठन करें। यदि समिति में किसी न्यायिक अधिकारी की नियुक्ति की जाती है, तो वे उसके अध्यक्ष होंगे। न्यायिक अधिकारी और/या शिक्षाविद् के पारिश्रमिक का निर्धारण परस्पर सहमति से किया जाएगा। यदि यह पाया जाता है कि शिक्षकों की नियुक्ति *अस्थायी आधार* पर की गई है, तो विद्यालय सेवा बोर्ड को यह निर्देश दिया जाएगा कि वह विधि के पूर्ण अनुपालन में नियमित नियुक्तियाँ सुनिश्चित करे। [53- ई-एच; 54-ए, बी]

8.5. समिति अपीलकर्ताओं के ऐसे सभी व्यक्तिगत मामलों पर भी विचार करेगी, जैसा कि उच्च न्यायालय के फैसले के कंडिका 35 में निर्देश दिया गया है। मान्यता का दावा करने वाले या कोई अन्य दावा करने वाले सभी शैक्षणिक संस्थान तारीख से तीन सप्ताह के भीतर सभी सहायक दस्तावेजों के साथ अपने अभ्यावेदन दाखिल करेंगे। अपने आवेदनों में, संस्थानों को प्रत्येक वर्ग में वर्षवार प्रवेश लेने वाले छात्रों का विवरण भी देना होगा। [54- डी]

8.6. मुख्य सचिव उक्त प्रतिवेदन को अपने टिप्पणियों सहित कार्यकारी कार्य के नियमों के अनुसार उपयुक्त प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करेंगे, और यह अपेक्षित है कि बिहार सरकार का उक्त प्राधिकारी समुचित निर्णय लेगा। (54- जी-एच)

8.7. राज्य सरकार उनके विरुद्ध उपयुक्त कार्रवाई कर सकती है, जो सरकार की योजना के कार्यान्वयन की प्रक्रिया में अनियमितताओं तथा/अथवा अवैधानिकताओं के लिए उत्तरदायी पाए जाएँ, और यह कार्रवाई विधि के अनुसार की जाएगी। (55-ए)

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2001 की दीवानी अपील संख्या 6626-6675।

पटना उच्च न्यायालय के 7.12.1999 के निर्णय और आदेश से सी. सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 4783/96, 10397/92, 1224/94, 1772/93, 1604, 1223, 1704/94, 1993 का 5585, 1551, 1430/94, 5116, 4145, 8492, 8499, 8858, 8498, 8720, 11924, 6293, 6777, 6164, 6817, 7239/93, 12326/92, 2752, 2371/94, 8741, 5586, 4427, 12930, 3847/93, 2725, 3064, 1705, 1549, 2676/94 और एल.पी.ए. 1092/1995

के साथ

2001 की दीवानी अपील संख्या 6676-6681

राकेश द्विवेदी, सुनील कुमार, पी. एस. मिश्रा, रविंदर श्रीवास्तव बी.बी. सिंह, श्रीमती सुनीता आर सिंह, श्रीश कुमार मिश्रा वी. पी. सिंह, इरशाद अहमद, अनीता कानूनगो, संतोष कुमार, विजय कुमार पांडेय, चंद्रकांत नायक, राकेश के शर्मा, अशोक माथुर, अरूप बनर्जी, देब प्रसाद मुखर्जी, डी. एन. गोबर्धन, सुश्री पिंगी आनंद, सुश्री गीता लूथरा, श्रीमती कीर्ति सिन्हा, उग्र शंकर प्रसाद, राम सागर सिंह, कुणाल वर्मा, तथागत हर्ष वर्धन, उपेंद्र मिश्रा, ध्रुवकुमार झा, अमितेश चंद्र मिश्रा, हिमांशु शेखर, अंभोज कुमार सिन्हा, हिमांशु मुंशी और कमलेंद्र मिश्रा उपस्थित पक्षों के लिए।

न्यायालय का निर्णय

एस. बी. सिन्हा, न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया कानून और तथ्य के सामान्य प्रश्नों से जुड़ी इन अपीलों को एक साथ सुनवाई के लिए लिया गया था और इस सामान्य निर्णय द्वारा इनका निस्तारण किया जा रहा है।

परिचय:

शिक्षा का प्रदान किया जाना राज्य का एक सार्वभौम कार्य है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 21-क में यह परिकल्पित है कि 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों को शिक्षा का

मौलिक अधिकार प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद 15 के खंड (3) में महिलाओं तथा बच्चों के लिए विशेष संरक्षण और सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया है।

नीतिगत निर्णय:

संभावित रूप से, उपर्युक्त संवैधानिक योजना को ध्यान में रखते हुए, राज्य द्वारा परियोजना विद्यालयों की स्थापना हेतु एक नीतिगत निर्णय अपनाया गया। बिहार राज्य को तुलनात्मक रूप से शैक्षणिक रूप से पिछड़ा माना जाता है। उक्त समस्या का समाधान करने के उद्देश्य से राज्य ने परिपत्र संख्या 1115, दिनांक 27.5.1981 जारी किया, जिसमें यह नीतिगत निर्णय निर्धारित किया गया कि छठी पंचवर्षीय योजना की शेष चार वर्षों की अवधि—अर्थात् 1981-1982 से 1984-1985 तक—के दौरान प्रत्येक प्रखंड में कम-से-कम चार उच्च विद्यालयों की स्थापना का लक्ष्य प्राप्त किया जाए, जिनमें से एक विद्यालय कन्या उच्च विद्यालय हो सकता है।

उक्त परिपत्र में यह उल्लेख किया गया है कि प्राप्त सूचनाओं के अनुसार अनेक प्रखंड ऐसे हैं जहाँ चार से कम विद्यालय क्रियाशील हैं। राज्य के 587 प्रखंडों में से 435 प्रखंडों की पहचान की गई, जहाँ एक भी मान्यता प्राप्त कन्या उच्च विद्यालय नहीं था। प्रस्तावित विद्यालयों की संख्या, जिनका उद्घाटन किया जाना था, निम्नलिखित है :

1981-82	150
1982-83	200
1983-84	200
1984-85	100
कुल	650

संथाल परगना और छोटा नागपुर के वे जिले, जो उस समय बिहार राज्य का हिस्सा थे तथा अब झारखण्ड राज्य का भाग हैं, को प्राथमिकता दी जानी थी, क्योंकि शैक्षणिक दृष्टि से वे क्षेत्र तुलनात्मक रूप से अधिक पिछड़े पाए गए थे। उक्त क्षेत्रों के सात जिलों में सरकार ने वर्ष 1981-82 में प्रत्येक प्रखंड में 299 नए उच्च विद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव किया था। यह लक्ष्य प्राप्त करना—अर्थात् न्यूनतम चार उच्च विद्यालयों की स्थापना—कठिन पाया गया, क्योंकि यह भी प्रत्याशित था कि यदि चार उच्च विद्यालय स्थापित कर दिए

जाएँ, तब भी इतने विद्यालयों के लिए पर्याप्त छात्र उपलब्ध नहीं हो पाएँगे। अतः उक्त क्षेत्रों में निम्नलिखित शर्तों के अधीन कम-से-कम दो उच्च विद्यालयों की स्थापना अनिवार्य रूप से प्रस्तावित की गई:

"1.संथाल परगना	15
2. रांची	9
3. पलामू	9
4. हजारीबाग	13
5. गिरिडीह	4
6. धनबाद	2
7. सिंहभूम	13
कुल	65 "

इसमें आगे कहा गया था कि:

"4. छोटानागपुर तथा संथाल परगना क्षेत्र में पदस्थापित जिला शिक्षा पदाधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने जिलों के ऐसे प्रखंडों की सूची तत्काल तैयार करेंगे, जहाँ 2 (दो) से कम उच्च विद्यालय हैं, तथा ऐसे प्रबंध सुनिश्चित करेंगे कि वर्तमान वित्तीय वर्ष, अर्थात् 1981-82 में, उनके जिले में कम-से-कम दो उच्च विद्यालय स्थापित किए जा सकें। नए उच्च विद्यालयों की स्थापना संबंधी प्रस्ताव तैयार करते समय उन उच्च विद्यालयों को प्राथमिकता दी जाएगी जिन्हें स्थापना हेतु अनुमति प्रदान की गई है, और यह प्रयत्न किया जाएगा कि जिन उच्च विद्यालयों को स्थापना की अनुमति दी गई है, वे मान्यता संबंधी सभी शर्तों को पूर्ण करें, ताकि केवल उन्हें ही मान्यता प्रदान की जा सके। इस प्रकार कम-से-कम दो उच्च विद्यालयों की स्थापना बिना विलंब के सुनिश्चित की जा सकती है। एक ओर जहाँ स्थापना हेतु अनुमति प्राप्त उच्च विद्यालयों को मान्यता मिल सकेगी, वहीं दूसरी ओर भूमि, भवन आदि जैसे स्थानीय संसाधनों का उचित प्रकार से उपयोग भी सम्भव होगा तथा

सरकार को सदस्यता/अनुदान के रूप में पर्याप्त राशि भी प्राप्त होगी। यदि किसी प्रखंड में ऐसे विद्यालय उपलब्ध न हों जिन्हें स्थापना हेतु अनुमति प्रदान की गई हो, तो जिला शिक्षा पदाधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि जनसंख्या, दूरी आदि को दृष्टिगत रखते हुए वे ऐसे स्थानों पर उच्च विद्यालय की स्थापना का प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे जहाँ सरकारी भूमि आसानी से उपलब्ध हो, जिससे भूमि क्रय पर होने वाला व्यय बचाया जा सके। भूमि एवं भवन प्राप्त करने के प्रयास स्थानीय प्रयासों के माध्यम से किये जायेंगे।”

5. राज्य सरकार ने यह निर्णय भी लिया है कि वर्ष 1981-82 में छोटानागपुर तथा संथाल परगना क्षेत्र के 7 जिलों में उन प्रखंडों में एक कन्या उच्च विद्यालय स्थापित किया जाए, जहाँ पहले से कम-से-कम 3 बालक उच्च विद्यालय क्रियाशील हैं। इस प्रकार उक्त प्रखंडों में कम-से-कम 4 उच्च विद्यालयों की स्थापना का लक्ष्य प्राप्त हो जाएगा, जिनमें कम-से-कम एक कन्या उच्च विद्यालय अवश्य होगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उक्त क्षेत्र में जिला-वार निम्नांकित संख्या में कन्या उच्च विद्यालय स्थापित किए जाने होंगे:

ज़िले का नाम	नव स्थापित बालिका उच्च विद्यालय की संख्या:
1. संथाल परगना	8
2. रांची	8
3. पलामू	नील
4. हजारीबाग	5
5. गिरिडीह	2
6. धनबाद	1
7. सिंहभूम	5
कुल =	29 "

जिला शिक्षा पदाधिकारियों को कन्या उच्च विद्यालयों की स्थापना हेतु कार्यवाही करने का निर्देश दिया गया था। राज्य द्वारा यह भी निर्णय लिया गया कि संथाल परगना एवं

छोटानागपुर क्षेत्रों में 14 अन्य उच्च विद्यालय भी स्थापित किए जा सकते हैं। ऐसे प्रखंडों में, जहाँ कम-से-कम दो उच्च विद्यालय पहले से क्रियाशील हैं तथा जहाँ स्थानीय पदाधिकारी जनसंख्या, प्रखंड के क्षेत्रफल आदि के आधार पर नए विद्यालयों की स्थापना को आवश्यक समझते हैं, वहाँ स्थापित किए जाने वाले ऐसे उच्च विद्यालय निम्नलिखित शर्तों के अधीन बालक उच्च विद्यालय होंगे:

1. संथाल परगना	4
2. रांची	3
3. पलामू	2
4. हजारीबाग	1
5. गिरिडीह	1
6. धनबाद	1
7. सिंहभूम	1
कुल=	14

उक्त परिपत्र के कंडिका 8 में यह उल्लेख है कि वर्ष 1981-82 में संथाल परगना और छोटानागपुर क्षेत्रों में कुल 108 उच्च विद्यालय स्थापित किए जा सकते हैं, जिनमें से 79 उच्च विद्यालय बालकों के लिए और 29 उच्च विद्यालय कन्याओं के लिए होंगे।

इसके अतिरिक्त, संथाल परगना और छोटानागपुर से बाहर आने वाले क्षेत्रों से संबंधित जो नीतिगत निर्णय लिया गया, उसमें यह निर्देश दिया गया कि:-

"छोटानागपुर और संथाल परगना के बाहर राज्य के अन्य क्षेत्रों में भी कुछ ऐसे प्रखंड अभी भी हैं जहाँ एक भी उच्च विद्यालय नहीं है या प्रत्येक प्रखंड में विद्यालयों की संख्या 2 से कम है। अतः राज्य सरकार ने यह निर्णय भी लिया है कि

वर्ष 1981-82 में राज्य के अन्य क्षेत्रों में जिला-वार निम्नलिखित संख्या में उच्च विद्यालय स्थापित किए जाएंगे:"

जिले की संख्या	नए स्थापित किए जाने वाले लड़कों के विद्यालयों की संख्या
1. रोहतास	2
2. भागलपुर	1
3. पूर्णिया	2
4. सहरसा	1
5. पश्चिम चंपारण	2
6. पूर्वी चंपारण	1
कुल=	9 "

संथाल परगना और छोटानागपुर के अतिरिक्त उन क्षेत्रों में, जहाँ कम-से-कम बालक उच्च विद्यालय संचालित हैं, 33 कन्या उच्च विद्यालय भी स्थापित किए जाने का प्रस्ताव था। यह निर्देश दिया गया कि वर्ष 1981-82 के अंत तक 150 उच्च विद्यालयों की स्थापना का लक्ष्य निश्चित रूप से प्राप्त किया जाना चाहिए। 3.9.1981 के परिपत्र द्वारा यह निर्णय लिया गया कि वर्ष 1981-82 में 150 विद्यालय स्थापित किए जाएँ, और इसके अंतर्गत जिला शिक्षा पदाधिकारियों को निर्देशित किया गया कि वे क्षेत्रीय शिक्षा निदेशक की स्वीकृति प्राप्त कर स्थान का चयन करें तथा सरकार की अनुमोदन प्राप्त करें।

फिर से 21.2.1982 के एक अन्य परिपत्र में परियोजना विद्यालयों के शिक्षकों की नियुक्ति का तरीका एवं पदों की मान्यता/नियमन हेतु आवश्यक योग्यता निर्धारित की गई, जिसके लिए भवन निर्माण आदि के हेतु 1.5 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए थे।

यह विवाद में नहीं है कि 1981-82 के दौरान 150 विद्यालयों की स्थापना की गई थी। राज्य के अनुसार, राज्य के विभिन्न जिलों में स्थित प्रथम स्तर पर स्थापित ऐसे विद्यालयों की संख्या इस प्रकार थी:

दरभंगा	-	8
मधुबनी-		10
समस्तीपुर	-	4
बेगुसराय	-	2
खगड़िया	-	1
सीतामढ़ी	-	1
पूर्वी चम्पारण-		2
पश्चिम चंपारण-		3
गोपालगंज	-	3
सारण	-	4
मुजफ्फरपुर	-	3
पूर्णिया	-	3
भागलपुर	-	4
लोहरदग्गा	-	2
गुमला	-	1
नालंदा	-	1
मुंगेर	-	1
भोजपुर-		2
संथाल परगना-		2
पलामू	-	4
नवादा	-	2

गया -	4
औरंगाबाद -	1
गिरिडीह -	1
सिंहभूम -	1
पटना -	1
बेगूसराय -	3

योजना का कार्यान्वयन:

यह भी विवादास्पद नहीं है कि मौजूदा विद्यालयों की पहचान के उद्देश्य से गठित तीन सदस्यीय समिति ने 57 विद्यालयों की पहचान की। जिन विद्यालयों की पहचान की गई, उन्हें मान्यता दी गई और शिक्षकों की नियुक्तियाँ विद्यालय सेवा बोर्ड द्वारा 23.2.1985 के उपरोक्त पत्र के अनुसार की गई, जिसके प्रासंगिक प्रावधान निम्नलिखित हैं:

"(क) विद्यालयों की स्थापना में प्राथमिकता प्रखंड मुख्यालयों को प्रदान की जाएगी।

(ख) यदि प्रखंड में बालिका विद्यालय नहीं है तो समिति तय करेगी कि विद्यालय स्थापित करना कहाँ उचित होगा।

(ग) जहां प्रखंड मुख्यालय या उससे दूर एक से अधिक ऐसे विद्यालय स्थापित किए गए हैं, वहां ऐसे विद्यालयों की स्थापना के लिए राज्य सरकार द्वारा दी गई अनुमति की तारीख और विद्यालय के भौतिक संसाधनों की श्रेष्ठता के आधार पर उनमें से एक विद्यालय का चयन किया जाएगा।

(घ) जहाँ कोई विद्यालय लोक पहल द्वारा स्थापित किया गया है और उसे परियोजना के अंतर्गत लिया जाता है, वहाँ के शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड द्वारा की जाएगी।

लगभग 4.2.1989 को उन विद्यालयों में सक्षम और योग्य कार्यरत शिक्षण तथा गैर-शिक्षण कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए एक परिपत्र जारी किया गया था। इन विद्यालयों को प्रबंधन के दृष्टिकोण से राष्ट्रीयकृत विद्यालयों की श्रेणी में नहीं रखा जाना था और ऐसे विद्यालयों के प्रबंधन का नियंत्रण सरकार द्वारा किए जाने की औपचारिक अधिसूचना जारी की

जानी थी। निजी विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड द्वारा की जानी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि इस विषय में कुछ विवाद है क्योंकि तीन सदस्यीय समिति ने इन विद्यालयों को परियोजना विद्यालयों में शामिल करने के लिए चयनित और सिफारिश की थी। जबकि राज्य के अनुसार 57 विद्यालयों की सिफारिश की गई थी, उत्तरदाता यह दावा करते हैं कि वास्तव में 225 ऐसे विद्यालयों की सिफारिश की गई थी। राज्य का तर्क यह है कि सरकार द्वारा सीधे चयनित 75 विद्यालय और समिति द्वारा सिफारिश किए गए 57 विद्यालय सभी निजी विद्यालय थे और इन्हें सरकारी निधियों से स्थापित नहीं किया गया था।

यह भी विवाद में नहीं है कि इस तथ्य के बावजूद कि ऐसे विद्यालयों को वर्ष 1985 में मान्यता प्राप्त थी; शिक्षकों के लिए योग्यता और उनकी संख्या दिनांक 04.02.1989 के एक सरकारी पत्र द्वारा निर्धारित की गई थी, जिसके प्रासंगिक खंड निम्नानुसार हैं:

"(i) ऐसे व्यक्तियों को सरकारी सेवा में शिक्षक के रूप में नियुक्त किया जाएगा जो निम्नलिखित योग्यताओं को पूर्ण करते हों: विद्यालयों को जनता के सहयोग से खोला गया हो और विभागीय पत्र संख्या 142 दिनांक 23.2.1985 में निर्धारित अनुसार तीन सदस्यीय समिति द्वारा चयनित किया गया हो; विद्यालय ने माध्यमिक शिक्षा कार्यालय से स्थापना की अनुमति प्राप्त की हो; विद्यालय के छात्र बिहार विद्यालय परीक्षा बोर्ड द्वारा आयोजित परीक्षाओं के लिए विद्यालय से पंजीकृत और प्रस्तुत किए गए हों; ऐसे छात्रों का परिणाम विद्यालय के नाम पर प्रकाशित हुआ हो; प्रबंध समिति द्वारा स्वीकृत पद संख्या में नियुक्त किए जाने के लिए आवश्यक योग्यताएँ और प्रतिस्पर्धात्मक पात्रता रखता हो; कन्या उच्च विद्यालय में उस विषय के लिए उपयोगिता प्रमाणपत्र प्राप्त किया हो; और विद्यालय सेवा बोर्ड की सहमति प्राप्त की हो।

(ii) विद्यालयों की उपरोक्त श्रेणी में शिक्षकों की नियुक्ति कंडिका (iii) में उल्लिखित मानक संख्या के आलोक में पांच स्वीकृत पदों के विरुद्ध वरिष्ठता, योग्यता और उपयोगिता के आधार पर की जाएगी।

(iii) ऐसे विद्यालयों में शिक्षकों की मानक संख्या उसी प्रकार होगी जैसा कि सरकार के परिपत्र संख्या 705 दिनांक 12.10.1982 और परिपत्र संख्या 1027 दिनांक 2.11.1985 के अंतर्गत निर्धारित किया गया है।

(क) भाषा समूह-3 (हिंदी-1, अंग्रेजी-1 और संस्कृत-1)

(ख) मानविकी समूह-3 (गृह विज्ञान, भूगोल, नागरिक शास्त्र, अर्थशास्त्र और तीन वरिष्ठता, योग्यता और उपयोगिता के आलोक में)

(ग) विज्ञान समूह-2 (गणित-1, जीव विज्ञान-रसायन विज्ञान -1)

(घ) अन्य शिक्षक-1 (अल्पसंख्यक भाषा, संगीत, ललित कला, वाणिज्य, वरिष्ठता, योग्यता और उपयोगिता के आलोक में केवल एक)

ऐसे शिक्षकों की नियुक्तियों के उद्देश्य से, उक्त परिपत्र में नामित व्यक्तियों से एक स्क्रीनिंग समिति का गठन किया गया था। प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक की आयु 31 वर्ष तक निर्धारित की गई थी, जबकि एम.एड. डिग्रीधारकों के लिए आयु सीमा 32 वर्ष थी। उक्त परिपत्र का खंड (3), जो मूलतः उच्च न्यायालय में प्रस्तुत विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं का विषय था, निम्नलिखित है :

"3. केवल उन्हीं शिक्षकों की सेवाओं को मान्यता हेतु विचार किया जाएगा जो वर्तमान में कार्यरत हैं और जिन्हें प्रबंधन समिति द्वारा स्थापना की अनुमति की तिथि, मुख्यालय द्वारा चयन की तिथि, या जिला स्तर पर सक्षम समिति द्वारा चुनाव की तिथि से पूर्व नियुक्त किया गया हो।

उक्त विद्यालयों के लिए 5 स्वीकृत पद निर्धारित किए गए थे। राज्य के अनुसार, 1989 के उक्त परिपत्र के अनुसार, 56 विद्यालयों को मान्यता दी गई है और उनके शिक्षकों को वेतन दिया जा रहा है। हालांकि, उक्त 56 विद्यालयों में से 4 विद्यालय अब झारखंड राज्य में हैं।

रिट कार्रवाहियां :

विभिन्न विद्यालयों के शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों ने 1992 से 1997 के बीच पटना उच्च न्यायालय में बड़ी संख्या में विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ दायर की, जिसमें *अन्य बातों के साथ-साथ* यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि 04.02.1989 का उक्त परिपत्र मनमाना और भेदभावपूर्ण है। इन विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं में 300 विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों को वेतन भुगतान के लिए निर्देश मांगे गए, जिन्हें क्रमशः 12.02.1985 और 23.02.1985 के सरकारी पत्र के अनुसार चयनित बताया गया। इन विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं में विभिन्न आदेश पारित किए गए, जिनमें से कुछ आदेश एक-दूसरे के विपरीत थे। यह मामला अंततः इस न्यायालय तक पहुँचा। इस न्यायालय ने 23.07.1997 के आदेश द्वारा, जो 1996 की दीवानी अपील संख्या 10245 और संबंधित मामलों में पारित किया गया,

ऐसे विरोधाभासी निर्णयों को देखते हुए यह विचार व्यक्त किया कि इस मामले का निस्तारण पटना उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा किया जाना चाहिए।

उच्च न्यायालय के निष्कर्ष:

उक्त निर्देशानुसार पटना उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ का गठन किया गया, और 07.12.1999 के आक्षेपित निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि :

(i) विचाराधीन विद्यालयों की स्थापना/अधिग्रहण सरकार के पत्र दिनांक 27.05.1981 के अनुसार बनाई गई योजना के तहत एक सतत प्रक्रिया थी और यह एकल लेन-देन का रूप धारित करती थी ताकि एक क्षेत्र के छात्रों के साथ किसी अन्य क्षेत्र के छात्रों के बीच किसी प्रकार का भेदभाव उत्पन्न न हो।

(ii) शिक्षकों की सेवाओं की मान्यता/नियमितीकरण और 1981-82 के परियोजना विद्यालयों के संबंध में उनके वेतन के भुगतान को नियंत्रित करने वाले प्रावधान 1984-85 के दौरान चुने गए विद्यालयों पर भी लागू होंगे।

(iii) उच्च न्यायालय के समक्ष राज्य के स्पष्ट रुख को देखते हुए, चयन की प्रक्रिया वर्ष 1986 में पूरी की गई थी और वर्ष 1984-85 के दौरान 300 परियोजना विद्यालयों की स्थापना या चयन के संबंध में कोई विवाद नहीं है।

(iv) वर्ष 1984-85 में चुने गए परियोजना विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं की मान्यता और नियमितीकरण के संबंध में प्रश्न को निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया था:

(क) विद्यालयों में शिक्षकों की स्वीकृत संख्या;

(ख) नियुक्ति की तारीख को न्यूनतम योग्यता;

(ग) नियुक्ति की तारीख को अधिक आयु और कम आयु;

(घ) डिग्री समतुल्यता;

(च) वर्ष 1984-85 के लिए सभी विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवा शर्तों की मान्यता/नियमितीकरण के लिए क्षेत्र धारण करने वाले परिपत्र के संबंध में प्रश्न;

यहाँ अन्य बातों के साथ-साथ यह भी निर्णय किया गया कि : दिनांक 04.02.1989 के पत्र संख्या 142 के खंड (ii) और (iii) में निहित अस्पष्टताओं और विरोधाभासों को देखते हुए, शिक्षकों की स्टाफिंग पैटर्न में प्रधानाचार्य/प्रधानाध्यापिका सहित 9 पद शामिल होंगे, जैसा कि सरकार के परिपत्र संख्या 705 दिनांक 12.10.1982 में निर्धारित किया गया है; (ii) न्यूनतम योग्यताएँ प्राप्त करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा किसी अंतिम तिथि को निर्धारित करने के किसी नीतिगत निर्णय की अनुपस्थिति में, संबंधित विद्यालयों की प्रबंधन समिति द्वारा उनकी नियुक्ति के समय प्रशिक्षित स्नातक न होने के आधार पर शिक्षकों की सेवाओं की मान्यता/नियमन को अस्वीकार करना उचित नहीं होगा; (iii) सामान्य श्रेणी के परियोजना विद्यालयों के शिक्षकों की पात्रता आयु उनके संबंधित विद्यालय की प्रबंधन समिति द्वारा नियुक्ति की तिथि पर 31 वर्ष होगी; यह देखते हुए कि शिक्षक लगातार 17 वर्ष से अधिक समय तक विद्यालयों में कार्यरत रहे हैं, उन्हें स्टाफिंग पैटर्न के भीतर अपनी सेवाओं की नियमितीकरण/मान्यता का अधिकार प्राप्त है; (iv) नियुक्ति के लिए न्यूनतम पात्रता आयु 18 वर्ष होगी; (v) बी.टी. प्रमाणपत्र की योग्यता बी.एड. के समकक्ष नहीं है, क्योंकि माध्यमिक विद्यालय परीक्षा बोर्ड द्वारा आयोजित बी.टी. परीक्षा में मैट्रिकुलेशन उत्तीर्ण कोई भी व्यक्ति भाग ले सकता है और प्रमाणपत्र प्राप्त कर सकता है, जबकि कोई व्यक्ति बी.एड. की डिग्री केवल स्नातक होने पर ही प्राप्त कर सकता है। हालांकि, राज्य सरकार के प्राधिकरण के लिए यह विचार करना खुला रहेगा कि क्या बी.टी. प्रमाणपत्र को बी.एड. योग्यता या शिक्षा में डिप्लोमा योग्यता के समकक्ष माना जा सकता है; (vi) दिनांक 04.02.1989 के परिपत्र संख्या 142 का प्रावधान पिछली तारीख पर लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि राज्य को किसी भी परिपत्र को सरकारी कर्मचारियों के अधिकारों के नुकसान के साथ पिछली तारीख पर संशोधित करने का अधिकार नहीं है; (vii) वर्ष 1981-82 के परियोजना विद्यालयों के शिक्षकों की सेवाओं की मान्यता/नियमन और उनके वेतन के भुगतान से संबंधित प्रावधान वर्ष 1984-85 में चयनित विद्यालयों पर भी लागू होंगे।

हालाँकि, पूर्ण पीठ का यह मत था कि इसे उस व्यापक प्रस्ताव की जांच करने के लिए गठित किया गया था, जो कि राज्य द्वारा जारी विभिन्न परिपत्रों के दायरे और लागू होने के संबंध में था, विशेष रूप से परियोजना विद्यालयों में योजना के कार्यान्वयन और शिक्षण एवं गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के संबंध में उनकी पात्रता, योग्यताएँ, उपयुक्तता आदि के संदर्भ में नियमितीकरण/मान्यता के उद्देश्य से। पूर्ण पीठ ने यह भी स्पष्ट

किया कि व्यक्तिगत मामलों की समीक्षा राज्य के प्राधिकरणों द्वारा उसके निष्कर्षों के अनुसार की जानी चाहिए, इस प्रकार कहा गया कि :

" निश्चित रूप से याचिकाकर्ताओं के व्यक्तिगत मामलों की समीक्षा उत्तरदाता प्राधिकरणों द्वारा इस पूर्ण पीठ के निष्कर्षों के अनुसार की जाएगी, क्योंकि हमें संबंधित पक्षों द्वारा तथ्यों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया है। कुछ मामलों में राज्य ने प्रतिवादात्मक शपथपत्र प्रस्तुत नहीं किया है, संभवतः इस धारणा के तहत कि एक बार इस न्यायालय ने सिद्धांत तय कर दिया, तो संबंधित प्राधिकरण व्यक्तिगत मामलों की समीक्षा करेगा और उक्त सिद्धांत के प्रकाश में उनका निस्तारण करेगा।"

आगे यह भी निर्देश दिया गया:

"36. अतः, उपर्युक्त अभिलेखित निष्कर्षों के आलोक में, सभी विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ निस्तारित की जाती हैं और उत्तरदाता प्राधिकरणों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे संबंधित विद्यालयों में याचिकाकर्ताओं की सेवाओं की मान्यता/समावेशन के दावे की समीक्षा करें। चूंकि ये मामले लंबे समय से लंबित रहे हैं, इसलिए इस पूर्ण पीठ के निर्देशों का अंतिम कार्यान्वयन इस निर्णय की प्रति प्राप्ति/उपस्थापन की तिथि से चार महीने की अवधि के भीतर सक्षम प्राधिकरण द्वारा किया जाना चाहिए। तथापि, इन मामलों की वास्तविकताओं और परिस्थितियों के दृष्टिगत, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

इस न्यायालय के समक्ष अपीलें :

2001 की दीवानी अपील संख्या 6625-6675 बिहार राज्य द्वारा दायर की गई थी, जिसमें उक्त निर्णय की शुद्धता पर प्रश्न उठाया गया, जबकि 2001 की दीवानी अपील संख्या 6681 एवं 6676-78 तथा 2001 की दीवानी अपील संख्या 6679-80, *अन्य बातों के साथ*, उन हिस्सों को चुनौती देने के लिए दायर की गई थी, जो निर्णय के पक्ष में थे।

बाद की घटनाएँ:

हालाँकि, इन अपीलों में उठाए गए प्रश्नों पर ध्यान देने से पहले, हम बाद की घटनाओं पर ध्यान देंगे जो तत्काल मामले में निर्णय के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हैं।

बिहार राज्य द्वारा इन विशेष अनुमति याचिकाओं को दायर करने के बाद, आक्षेपित फैसले के कार्यान्वयन के संबंध में सवाल मंत्रिमंडल के समक्ष विचार के लिए आया। 25.01.2000 को या उसके आसपास, मंत्रिमंडल ने उक्त 300 विद्यालयों में सहायक शिक्षकों के 4 अतिरिक्त पद बनाने का निर्णय लिया, जिसमें कुल 1200 शिक्षक थे जिन्हें कथित तौर पर वर्ष 1984-85 में चुना/संभाला गया था। इसने 300 परियोजना विद्यालयों के 9 स्वीकृत पदों के विरुद्ध शिक्षकों के वेतन के भुगतान के लिए रु 11,26,80,000/- के वार्षिक व्यय को मंजूरी दी।

लगभग 20.11.2000 को बिहार राज्य का दो राज्यों में विभाजन किया गया, अर्थात् बिहार राज्य और झारखंड राज्य। उत्तरदाताओं के अनुसार, वित्तीय वर्ष 1984-85 में चयनित/अधिग्रहित 300 परियोजना कन्या उच्च विद्यालयों में से 211 बिहार राज्य के क्षेत्राधिकार में आते हैं और 89 झारखंड राज्य के क्षेत्राधिकार में चले गए।

04.08.2003 के पत्र द्वारा, राज्य ने बिहार राज्य के क्षेत्राधिकार में आने वाले 211 परियोजना कन्या उच्च विद्यालयों में से 151 विद्यालयों को वास्तविक मान्यता देने का प्रयास किया।

30.03.2004 दिनांकित एक पत्र द्वारा, यह निर्धारित किया गया था:

"विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों के शिक्षकों की नियुक्तियों के संबंध में सी.बी.आई. द्वारा जांच चल रही है, उच्च न्यायालय, पटना में दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिका क्रमांक सी.डब्ल्यू.जे.सी. संख्या 9847/98 के दृष्टिगत। यदि किसी कर्मचारी की नियुक्ति जांच के बाद अवैध पाई जाती है, तो उसके वेतन की जो राशि पहले ही भुगतान की जा चुकी है, उसे नियुक्ति रद्द करने के पश्चात एक बार में वसूल किया जाएगा।"

बिहार सरकार ने राज्य के अधिकार क्षेत्र में आने वाले परियोजना विद्यालयों के कामकाज को जारी रखने की मंजूरी दी है।

प्रस्तुतियाँ:

राज्य की ओर से:

श्री राकेश द्विवेदी, वरिष्ठ अधिवक्ता, जो बिहार राज्य की ओर से उपस्थित हैं, ने प्रस्तुत किया:

(i) उच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट त्रुटि की कि राज्य ने वर्ष 1984-85 में 300 विद्यालयों को परियोजना विद्यालय के रूप में अधिग्रहित किया, जबकि वास्तव में केवल 132 विद्यालय ही अधिग्रहित किए गए थे। इस संबंध में हमारा ध्यान उन शिक्षकों द्वारा दायर प्रतिवादात्मक शपथ पत्र की ओर आकृष्ट किया गया, जिसमें उन्होंने स्वीकार किया कि 75 चयनित विद्यालयों को छोड़कर अन्य प्रस्तावित विद्यालय थे, और उन 75 विद्यालयों को अधिग्रहित माना जाएगा।

(ii) उत्तरदाता द्वारा 24.12.1995 के पत्र पर अवलम्बन, जिसके द्वारा विधान परिषद को कुछ जानकारी प्रदान की गई थी, उच्च न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष निकालने के आधार के रूप में नहीं ली जा सकती कि 1984-85 परियोजना योजना के 300 विद्यालयों की स्थापना/अधिग्रहण के संबंध में कोई विवाद नहीं था। यद्यपि उसमें कई विद्यालयों का उल्लेख किया गया था, परंतु उक्त पत्र के अनुसार विद्यालयों की स्थिति निर्दिष्ट नहीं की गई थी और इस दृष्टि से, उक्त पत्र के कारण ही उच्च न्यायालय यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता था कि उन विद्यालयों को अधिग्रहित किया गया और शिक्षण तथा गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाएँ नियमित हो गईं। राज्य ने अपने शपथ पत्र में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि विद्यालयों की सूची प्रारंभिक (अनंतिम) प्रकृति की थी और अधिग्रहित विद्यालयों की अंतिम सूची नहीं थी।

(iii) उच्च न्यायालय ने राज्य द्वारा दायर दूसरी प्रति शपथ पत्र को गलत तरीके से पढ़ा, जिसमें 300 विद्यालयों की सूची दी गई थी, किंतु उसके अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 116 विद्यालयों को स्थापना की अनुमति नहीं दी गई थी और 37 विद्यालयों की मान्यता से संबंधित मामला विचाराधीन था। अन्य विद्यालयों की स्थिति को भी व्यक्तिगत रूप से दर्शाया गया था, जिससे स्पष्ट होता है कि कुछ मामलों में स्थल विवादित थे, कुछ विचाराधीन थे, और कुछ में स्क्रीनिंग नहीं की गई थी, भवन का निर्माण नहीं हुआ था, परियोजना प्रतिवेदन उपलब्ध नहीं थी, या भूमि उपलब्ध नहीं थी। इसके अतिरिक्त, कुछ विद्यालयों के संबंध में कुछ सिफारिशों को अस्वीकार किया गया था। दूसरी प्रतिवादात्मक शपथपत्र में राज्य द्वारा लिए गए रुख के दृष्टिगत, इसमें कोई संदेह नहीं कि 153 विद्यालयों को मान्यता या अधिग्रहित नहीं किया गया था।

(iv) अधिग्रहण' शब्द का प्रयोग अनौपचारिक ढंग से किया गया था, क्योंकि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 300ए में निहित प्रावधानों के अनुसार, कोई भी संपत्ति केवल उपयुक्त विधान द्वारा ही अधिग्रहित की जा सकती है या लिया जा सकता है। इस संबंध में, *बिशम्भर दयाल चंद्रमोहन और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*, [1982] एससीसी 39 तथा *जिलुभाई ननभाई खाचर और अन्य बनाम गुजरात राज्य और एक अन्य*, [1995] । पूरक 596 पर अवलम्बन रखी गई है। जब भी राज्य ने विद्यालयों को अधिग्रहित करने का इरादा किया, उसने संबंधित विधान पारित किए, जैसे कि बिहार गैर-राजपत्रित शैक्षणिक संस्थानों (अधिग्रहण) अधिनियम, 1988 और बिहार गैर-सरकारी प्राथमिक विद्यालय "नियंत्रण का अधिग्रहण" अधिनियम, 1976।

इस न्यायालय के निर्णय, *मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य बनाम ठाकुर भरत सिंह*, ए.आई.आर. (1967) एस. सी. 1170 [1967] 2 एस.सी.आर. 454, का संदर्भ देते हुए, श्री द्विवेदी ने प्रस्तुत किया कि किसी प्रशासनिक आदेश का नागरिक परिणाम होने पर उसे कानून द्वारा समर्थित होना चाहिए।

(v) जहाँ तक उक्त 04.02.1989 के परिपत्र के विषय में विद्यालयों के दूसरे चरण के लिए राज्य की योग्यता/मानदंड निर्धारित करने की क्षमता का प्रश्न है, इसके कारण न केवल शिक्षकों की संख्या 5 तक सीमित रही, बल्कि चूंकि इसमें शैक्षणिक योग्यताओं का निर्धारण किया गया था, इसलिए इसे पीछे की तारीख से लागू माना जाएगा। केवल इसलिए कि पहले चरण के विद्यालयों के लिए सरकार द्वारा 9 शिक्षकों की संख्या निर्धारित की गई थी, इसका यह अर्थ नहीं कि दूसरे चरण में निजी व्यक्तियों द्वारा स्थापित विद्यालयों के संबंध में समान मानक स्वतः ही से बनाए रखना आवश्यक था। यद्यपि राज्य सरकार ने दिनांक 25.01.2000 के आदेश द्वारा अनुमोदित विद्यालयों के लिए अतिरिक्त पद स्वीकृत किए, फिर भी आक्षेपित निर्णय की शुद्धता के प्रश्न पर विचार करना आवश्यक हो सकता है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि किसी विद्यालय की संख्या निर्धारित करने का एकमात्र अधिकार राज्य के पास है, जिसके लिए वित्तीय तंगी एक प्रासंगिक कारक हो सकता है। किसी भी स्थिति में, चूंकि शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों का नियमितीकरण भविष्य के लिए किया जाना था, इसलिए राज्य के पास 04.02.1989 के सरकारी पत्र के अनुसार इसके लिए मानदंड निर्धारित करने का आवश्यक अधिकार था। उक्त उद्देश्य के लिए यह ध्यान देने योग्य है कि अवर्गीकृत और अप्रशिक्षित शिक्षक नियमितीकरण का दावा करने के पात्र नहीं थे; इसलिए 04.02.1989

का आदेश केवल इसलिए पीछे की तारीख से लागू नहीं होगा कि इसे पूर्ववर्ती तथ्यों पर आधारित किया गया।

(vi) विद्यालयों के दूसरे चरण को 02.11.1985 के पत्र में उल्लिखित मानदंडों का लाभ नहीं दिया जा सकता था, क्योंकि पहले चरण के विद्यालय सरकार द्वारा स्थापित किए गए थे; लेकिन जहाँ तक दूसरे चरण के विद्यालयों का प्रश्न है, उनके लिए मानदंड पहली बार सरकार द्वारा 04.02.1989 के उक्त परिपत्र के अनुसार निर्धारित किए गए थे। चूंकि राज्य केवल मान्यता प्राप्त निजी विद्यालयों के नियमित शिक्षकों को वेतन प्रदान करने के लिए था, इसलिए शिक्षकों की संख्या निर्धारित करना राज्य के अधिकार क्षेत्र में था। यदि निजी विद्यालय अधिक कर्मचारी रखना चाहते थे, तो अतिरिक्त कर्मचारियों के वेतन का भुगतान उन्हें अपने स्वयं के कोष से करना आवश्यक था।

(vii) इस प्रकार के मामले में, यह तर्क दिया गया था कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का कोई उपयोग नहीं होगा, क्योंकि राज्य सभी शिक्षकों को वेतन प्रदान करने या निजी विद्यालयों के लिए शिक्षकों की एक सामान्य संख्या प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है।

विद्यालयों/शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की ओर से:

दूसरी ओर, कुछ मामलों में उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. एस. मिश्रा प्रस्तुत करेंगे:

(i) यह तथ्य कि 1984-85 में 300 परियोजना विद्यालयों का चयन किया गया, किसी भी प्रकार के संदेह या विवाद से परे है। उक्त विद्यालयों की स्थिति निम्नलिखित वर्गों में सूचीबद्ध की जा सकती है :

(क) सार्वजनिक सहायता के माध्यम से स्थापित विद्यालय लेकिन सीधे सरकार द्वारा चयनित, जैसे कि 75 विद्यालय, जो 12.02.1985 के पत्र संख्या 108 के निर्गमन की तिथि से स्थापित और अधिग्रहित किए गए।

(ख) सार्वजनिक सहायता के माध्यम से स्थापित विद्यालय, लेकिन 23.02.1985 के पत्र संख्या 142 के अनुसार तीन सदस्यीय समिति द्वारा परियोजना विद्यालय के रूप में अधिग्रहण के लिए अनुशंसित। इस संबंध में निर्भरता 2001 के आई.ए.

संख्या 114-130 के परिशिष्ट आर-1 (संपूर्ण) के पृष्ठ 23 से पृष्ठ 64 तक रखी गई है।

(ग) ऊपर उल्लिखित श्रेणी (क) और (ख) में वर्णित विद्यालय एक ही नामकरण, अर्थात् “परियोजना विद्यालय” के अंतर्गत आते हैं। ये विद्यालय जिला विद्यालयों (सरकारी विद्यालयों) या राष्ट्रीयकृत विद्यालयों के समान नहीं हैं, क्योंकि इनकी स्थापना/चयन सरकार द्वारा एक ऐसी योजना के अंतर्गत किया गया है, जिसका उद्देश्य कम से कम चार माध्यमिक/उच्च विद्यालय उपलब्ध कराना है, जिनमें से एक अनिवार्य रूप से बालिका विद्यालय होना चाहिए। सरकारी योजना के अनुसार, इन विद्यालयों की स्थापना अधिकांश मामलों में निजी विद्यालयों को अधिग्रहित करके की गई है, जिन्हें या तो स्थापना की अनुमति प्रदान की गई थी अथवा वे कम से कम प्रस्तावित विद्यालय थे।

(ii) पूर्व में पूर्ण पीठ के समक्ष यह स्वीकार किए जाने के पश्चात कि सभी विद्यालयों के चयन की प्रक्रिया वर्ष 1986 में तीन सदस्यीय समिति की सिफारिशों के आधार पर पूरी की गई थी, राज्य अब अलग दृष्टिकोण नहीं अपना सकता। किसी भी स्थिति में, राज्य ने विभिन्न दस्तावेजों में यह स्वीकार किया है कि अनेक परियोजना विद्यालय को अधिग्रहित किया गया था। हमें यह भी सूचित किया गया है कि याचिकाओं की लंबितता के दौरान उच्च न्यायालय द्वारा सचिव को निर्देश दिया गया था कि वित्तीय वर्ष 1984-85 में चयनित और अधिग्रहित 300 परियोजना विद्यालयों के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की सूची प्रस्तुत की जाए, जिसके परिणामस्वरूप संबंधित विद्यालयों की सूची संलग्न करते हुए एक शपथ पत्र दाखिल किया गया।

(iii) राज्य ने यह दृष्टिकोण विधान परिषद् के समक्ष भी अपनाया है, जैसा कि दिनांक 26.12.1995 के पत्र से प्रतीत होता है। किसी भी स्थिति में, चूंकि कैबिनेट ने स्वयं दिनांक 25.01.2000 को निर्णय लिया था, जब 300 विद्यालयों के लिए चार अतिरिक्त शिक्षकों के पदों को मंजूरी देकर निर्णय के एक भाग को लागू किया गया, इसलिए उक्त प्रश्न अब शेष नहीं रहता।

(iv) शिक्षा विभाग के सचिव द्वारा दिनांक 07.12.1994 को जारी एक पत्र में यह उल्लेख किया गया कि वर्ष 1984-85 में 300 परियोजना विद्यालयों का चयन किया गया था। पत्र में आगे यह भी दर्शाया गया कि यह योजना कक्षा छठी से कक्षा दसवीं तक लागू की

जानी है, जिसके लिए पाठ्यक्रम भी निर्धारित किया गया था। साथ ही यह उजागर किया गया कि वर्तमान में स्वीकृत पांच शिक्षकों की संख्या पर्याप्त नहीं है।

(v) बिहार राज्य ने 435 प्रखंडों में बालिका विद्यालय स्थापित करने की उपरोक्त योजना तैयार की थी, जिनकी पहचान की गई थी, जहां कोई मान्यता प्राप्त बालिका उच्च विद्यालय नहीं थे और इस मामले को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकार ने अगले वित्तीय वर्षों के दौरान विभिन्न प्रखंडों में कुल मिलाकर 650 बालिका उच्च विद्यालय खोलने का निर्णय लिया:

<u>"वर्ष</u>	<u>प्रखंडों की संख्या</u>
1981-82	150
1982-83	200
1983-84	200
1984-85	100 "

वर्ष 1981-82 में 150 विद्यालय स्थापित किए गए थे। तथापि, वर्ष 1982-83 में ऐसे कोई बालिकाओं के विद्यालय स्थापित नहीं किए गए और अतः दिनांक 25.01.1985 के उक्त परिपत्र के कारण विभिन्न प्रखंडों में 300 विद्यालय खोलने का निर्णय लिया गया। प्रारंभ में दिनांक 12.02.1985 के पत्र के माध्यम से विभिन्न प्रखंडों और जिलों में 75 विद्यालयों का चयन किया गया, जिसके पश्चात दिनांक 23.02.1985 के पत्र संख्या 142 के अनुसार निर्णय लिया गया कि आवश्यक सिफारिश के पश्चात तीन सदस्यीय समिति द्वारा सार्वजनिक सहायता से स्थापित 225 विद्यालयों का चयन किया जाएगा। अतः उक्त वर्ष में कुल 300 विद्यालय स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त कई अन्य दस्तावेज यह दर्शाते हैं कि राज्य द्वारा यहां प्रस्तुत विद्यालयों की संख्या संबंधी दृष्टिकोण सही नहीं है।

(vi) यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें विद्यालयों की संपत्ति का अधिग्रहण किया गया हो। इस तथ्य के दृष्टिगत कि ऐसा अधिग्रहण पक्षों के बीच हुए समझौते के आधार पर किया गया, राज्य के लिए यह भारतीय संविधान के अनुच्छेद 162 के प्रावधानों के अनुसार अनुमेय है। कार्यकारी शक्ति का प्रयोग वैधानिक शक्ति की पूर्ति के लिए किया जा सकता है और यदि किसी क्षेत्र में कोई कानून लागू नहीं है, तो ऐसी कार्यकारी शक्तियाँ, जो निहित, सहायक या

स्वाभाविक हैं, उनमें वे शक्तियाँ भी सम्मिलित होंगी जो संविधान के उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए आवश्यक हैं।

कार्यपालिका का प्राथमिक कर्तव्य यह है कि वह राज्य में जनता की शैक्षिक आवश्यकताओं का आकलन करे। यदि इस क्षेत्र में कोई विधि लागू नहीं है, तो उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक परिपत्र जारी किए जा सकते हैं, जिन्हें केवल विधायी स्वीकृति की कमी के कारण अवैध नहीं कहा जा सकता। राज्य का यह दृष्टिकोण कि विधान परिषद् को प्रस्तुत 300 विद्यालयों की सूची केवल अस्थायी थी, असत्य है, जैसा कि दिनांक 22.10.1999 के कार्यालय आदेश से स्पष्ट होता है, जिसमें उक्त सूची को अंतिम मानते हुए गुठानी, जिला सिवान के परियोजना विद्यालयों के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं को नियमित किया गया। यहां तक कि प्रधानाचार्य भी 224 परियोजना विद्यालयों में नियुक्त किए गए थे, जैसा कि दिनांक 02.10.1988 के पत्र से स्पष्ट है, जिसके लिए उनके वेतन और भत्तों हेतु निधि स्वीकृत की गई थी।

(vii) 1992 के सी. डब्ल्यू. जे. सी.संख्या 12326 में श्री ई. एम. के. अग्रवाल द्वारा पुष्टि किए गए द्वितीय प्रति शपथ पत्र की केवल सतही समीक्षा से स्पष्ट होता है कि क्रमांक 1 से 116 तक के विद्यालय केवल प्रस्तावित विद्यालय हैं और उन्हें स्थापना की आवश्यक अनुमति नहीं दी गई है। तथापि, उसी याचिका में दाखिल तृतीय प्रत्युत्तर शपथ पत्र में स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि उक्त विद्यालयों का चयन तीन सदस्यीय समिति द्वारा किया गया और उन्हें उद्घाटन की अनुमति प्राप्त नहीं हुई [पत्र संख्या 142 दिनांक 04.02.1989 के प्रावधानों के अनुसार]। इसके अतिरिक्त यह भी बताया गया कि क्रमांक 117 से 192 तक के विद्यालय वर्ष 1984-1985 के वे विद्यालय हैं, जो विभाग द्वारा संचालित हैं और कई स्थानों पर जिला प्राधिकरणों ने क्लर्क और चौकीदार नियुक्त किए हैं। यह भी उल्लेख किया गया कि क्रमांक 215 से 230 तक के विद्यालय वे हैं जिनके मामलों का निस्तारण सरकार द्वारा किया गया। उक्त सूची की समीक्षा से स्पष्ट होता है कि इन विद्यालयों में कर्मचारियों की सेवाओं की स्वीकृति दी गई है और इन विद्यालयों का चयन जिला चयन समिति द्वारा किया गया। विद्यालयों के शिक्षकों की सेवाओं की मान्यता और नियमितीकरण हेतु एक जांच समिति भी गठित की गई थी।

(viii) क्रमांक 1 से 116 तक प्रस्तावित विद्यालयों के अंतर्गत आने वाले विद्यालयों में से अनेक विद्यालय ऐसे हैं जिन्हें दिनांक 04.08.2003 के सरकारी पत्र के प्रावधानों के अनुसार मान्य किया गया है।

(ix) राज्य द्वारा दाखिल विशेष अनुमति याचिका के आधार 'एफ' में यह स्वीकार किया गया है कि 248 विद्यालयों की इमारतों का निर्माण पूरा हो चुका है। विद्यालयों के चयन के संबंध में स्वीकार किए गए तथ्य के दृष्टिगत, उच्च न्यायालय को यह विचार करने की आवश्यकता नहीं थी कि किसी विशेष परियोजना विद्यालय को अधिग्रहित/चयनित करने के सरकार के निर्णय की वैधता क्या है। अतः इस अवस्था में राज्य को उक्त प्रश्न उठाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

श्री रविन्द्र श्रीवास्तव, माननीय वरिष्ठ अधिवक्ता, जो 2001 की दीवानी अपील सं. 6626-6675 में उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित हुए, ने श्री मिश्रा के तर्कों में यह जोड़ते हुए प्रस्तुत किया कि चूँकि पूर्ण पीठ को 300 अधिग्रहित विद्यालयों से संबंधित द्वितीय चरण के विद्यालयों के समायोजन के प्रश्न पर एक व्यापक और सामान्य सिद्धांत निर्धारित करने के लिए कहा गया था, अतः अधिग्रहण की वैधता के प्रश्न पर उच्च न्यायालय से कोई निर्णय अपेक्षित नहीं था। इसलिए, राज्य को इस विषय में पहली बार इस न्यायालय के समक्ष यह आपत्ति उठाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

1992 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 12326 में दायर प्रति शपथपत्र में दिए गए निम्नलिखित बयानों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया है:

"यह प्रस्तुत किया जाता है कि द्वितीय चरण में परियोजना विद्यालयों की सूची की संख्या 304 है, और चार अतिरिक्त ऐसे परियोजना विद्यालय इस कारण हैं कि उनमें से चार को बाद में विशेष सरकारी आदेश द्वारा जोड़ा गया था।"

हमारा ध्यान दूसरे पूरक प्रति शपथपत्र की ओर आकर्षित किया गया है जिसमें निम्नलिखित बयान दिए गए हैं:

"(क) जो विद्यालय सार्वजनिक सहायता से स्थापित किए गए हैं लेकिन सीधे सरकार द्वारा चयनित किए गए हैं, उन्हें ऐसे पत्र के निर्गमन की तिथि से अधिग्रहित विद्यालय माना जाएगा।

(ख) जो विद्यालय सार्वजनिक सहायता से स्थापित किए गए हैं, परन्तु जिला दंडाधिकारी, डी.डी.ओ., तथा डी.ई.ओ. से युक्त तीन सदस्यीय समिति द्वारा पत्र संख्या 142 दिनांक 23.02.1985 के माध्यम से अनुशंसित हैं, उन्हें संबंधित विद्यालय के पक्ष में ऐसे पत्र के निर्गमन की तिथि से अधिग्रहित विद्यालय माना जाएगा।।

उक्त आधार पर यह प्रस्तुत किया गया कि अब दोनों श्रेणियों के विद्यालयों की स्थिति में कोई अंतर शेष नहीं रह गया है। किसी भी स्थिति में, चूँकि मंत्रिमंडल ने 300 परियोजना विद्यालयों में प्रत्येक के लिए चार अतिरिक्त पदों को स्वीकृति प्रदान करने का निर्णय लिया था, अतः राज्य को उक्त संख्या के विद्यालयों के अधिग्रहण के तथ्य को स्वीकार किया हुआ माना जाएगा। यद्यपि शिक्षक निरंतर कार्यरत रहे हैं और मंत्रिमंडल ने निधि जारी करने का निर्देश भी दिया था, फिर भी राज्य द्वारा इस न्यायालय के समक्ष ऐसे कुछ नए बिंदु उठाए जा रहे हैं, जिनका उन्हें कोई अधिकार नहीं है। शिक्षकों के वेतन भुगतान के संबंध में राज्य ने अस्थिर, भेदभावपूर्ण, अन्यायपूर्ण तथा मनमाना रवैया अपनाया है। यह तर्क कि किसी विधि के अभाव में विद्यालयों का अधिग्रहण नहीं किया जा सकता था, न्यायसंगत विबंधन के सिद्धांत द्वारा निषिद्ध है।

श्री सुनील कुमार, माननीय अधिवक्ता, जो 2001 की दीवानी अपील सं. 6676-6678 तथा 6679-6680 में अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित हुए, ने यह प्रस्तुत किया कि उक्त अपीलें आक्षेपित निर्णय के केवल कुछ अंशों तक सीमित हैं, अर्थात् उसके कंडिका सं. 24 से 27 तक, जिनके द्वारा पूर्ववर्ती उच्च विद्यालयों के उन शिक्षकों को नियमितीकरण का लाभ प्रदान नहीं किया गया, जो या तो बुनियादी प्रशिक्षित थे या शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित थे। यह प्रस्तुत किया गया कि सरकार द्वारा कई परिपत्र जारी किए गए, जिनके अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि राज्य ने बुनियादी प्रशिक्षित शिक्षकों तथा शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित शिक्षकों को शिक्षा में स्नातक के समकक्ष माना है, जिसका उल्लेख उच्च न्यायालय ने भी किया है; परंतु न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचने में त्रुटि कर बैठा कि ऐसी समकक्षता वहाँ लागू तो हो सकती है जहाँ निजी प्रबंधन के अधीन उच्च विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति हो, परंतु वही समकक्षता परियोजना विद्यालयों पर लागू नहीं होगी।

यह प्रस्तुत किया गया था कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि शारीरिक शिक्षा के शिक्षकों के साथ-साथ बुनियादी रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों को उच्च विद्यालयों में नियुक्तियों

के लिए आवश्यक योग्यता रखने के लिए आयोजित किया गया था, जब इसे राज्य द्वारा परियोजना विद्यालयों के रूप में लिया गया था, उक्त आधार पर उनकी सेवाओं को मान्यता नहीं देने का कोई कारण नहीं हो सकता है।

2001 के दीवानी अपील संख्या 6681 में उपस्थित श्री श्रीवास्तव ने यह प्रस्तुत किया कि उक्त अपीलकर्ता एक लिपिक था, जिसे विद्यालय की प्रबंध समिति द्वारा उस समय नियुक्त किया गया था जब उसकी आयु 18 वर्ष से कम थी। यद्यपि उसकी सेवाओं का नियमितीकरण कर दिया गया था और उसका वेतन इस प्रकरण के निर्णय के अधीन भुगतान किया जा रहा था, फिर भी उच्च न्यायालय के उस निर्णय से अपीलकर्ता को गंभीर पूर्वाग्रह हुआ है, जिसमें न्यूनतम नियुक्ति आयु 18 वर्ष निर्धारित की गई है। माननीय अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यदि उसकी सेवाओं को नियमित किए जाने का निर्देश नहीं दिया गया, तो यह उसके प्रति अत्यंत कठोर सिद्ध होगा।

विक्षेपण:

राज्य ने प्रश्नगत योजना को संवैधानिक लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए बनाया था। शिक्षा प्रदान करना राज्य का प्राथमिक कर्तव्य है। यद्यपि उच्च विद्यालयों की स्थापना तकनीकी रूप से संवैधानिक कार्य नहीं कही जा सकती, इस अर्थ में कि 14 वर्ष से अधिक आयु के भारतीय नागरिकों का इससे संबंधित कोई मौलिक अधिकार नहीं है, तथापि शिक्षा मानव विकास का अभिन्न अंग होने के कारण निस्संदेह एक मानव अधिकार है। संविधान निर्माताओं ने समानता संबंधी प्रावधान करते समय यह ध्यान में रखा था कि महिलाओं और बच्चों को विशेष संरक्षण की आवश्यकता है, और उसी उद्देश्य से भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15(3) के अंतर्गत संरक्षणात्मक भेदभाव एवं सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान किया गया।

इस मामले में, तथापि, बिहार राज्य द्वारा अपने रुख में परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। जहाँ वर्ष 1981 में तैयार की गई मुख्य योजना में यह उपबंध था कि राज्य स्वयं विद्यालयों की स्थापना करेगा, वह भी तत्कालीन बिहार राज्य के सर्वाधिक अविकसित क्षेत्रों—अर्थात् छोटानागपुर और संथाल परगना—में; वहीं उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि योजना के मूल उद्देश्य से अत्यधिक विचलन किया गया। छोटानागपुर और संथाल परगना क्षेत्रों में अधिक से अधिक बालिका विद्यालय स्थापित करने के स्थान पर राज्य ने अन्य क्षेत्रों में भी अधिकाधिक विद्यालय स्थापित करने का प्रयास किया। योजना के

क्रियान्वयन में बिहार राज्य द्वारा किया गया यह मूलभूत परिवर्तन यहीं समाप्त नहीं हुआ। 75 विद्यालयों की सीधे स्थापना तथा शिक्षक एवं गैर-शिक्षक कर्मचारियों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड के माध्यम से करने के उपरांत, राज्य ने अघोषित कारणों से निजी विद्यालयों को मान्यता प्रदान करने का इरादा किया।

योजना के क्रियान्वयन में राज्य किसी एक दृष्टिकोण का पालन करने में विफल या उपेक्षित रहा। यद्यपि राज्य ने स्पष्ट रूप से यह रुख अपनाया कि परियोजना विद्यालय राष्ट्रीयकृत विद्यालयों या सरकारी विद्यालयों की श्रेणी में नहीं होंगे, फिर भी यह स्पष्ट नहीं है कि निजी विद्यालयों की मान्यता हेतु चयन और पहचान करते समय किन आधारों पर उनके भवन निर्माण के लिए भी धन आवंटित किया गया। अतिरिक्त रूप से, यह समझना कठिन है कि विशेष अनुमति याचिका में यह कैसे प्रस्तुत किया गया कि प्रस्तावित 300 विद्यालयों में से 248 विद्यालयों के भवन निर्माण पूर्ण हो चुके हैं। विद्यालय भवनों के निर्माण के लिए धन आवंटन या उसका वास्तविक निर्माण, यह तर्क कि निजी विद्यालयों को मान्यता दी जानी थी, उसके अनुरूप नहीं बैठता।

इस प्रकार, बिहार राज्य ने विभिन्न समयों पर विभिन्न रुख अपनाए। अतः हमें यह स्पष्ट रूप से नहीं पता चल पाया कि कितने विद्यालय राज्य द्वारा स्वयं निर्मित किए गए, कितने सार्वजनिक सहायता से निर्मित किए गए और/या कितने विद्यालयों की पहचान की गई तथा उन्हें मान्यता/अधिग्रहण के लिए प्रस्तावित किया गया। उत्तरदाता यह उल्लेख करते हैं कि दिनांक 10.07.1995 को बिहार सरकार के मुख्य सचिव की अध्यक्षता में आयोजित प्रशासनिक पद स्वीकृति समिति की एक बैठक में 300 परियोजना बालिका उच्च विद्यालयों की सूची मंगाने का निर्णय लिया गया। इसके परिणामस्वरूप उक्त विद्यालयों की सूची, माध्यमिक शिक्षा निदेशक द्वारा प्रशासनिक पद स्वीकृति समिति के सचिव, बिहार को भेजी गई। एक पूछताछ के जवाब में, 300 परियोजना विद्यालय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की सूची बिहार विधान परिषद् को भेजी गई। तथापि, उसमें कुछ विद्यालयों को निर्माणाधीन बताया गया। 26.12.1995 के निदेशक के पत्र से यह स्पष्ट नहीं होता कि सभी विद्यालय संचालन में थे। यद्यपि, शिक्षा विभाग के सचिव ने उच्च न्यायालय के निर्देश पर सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 12326/1992 में एक शपथ पत्र दाखिल किया, जिसमें 300 परियोजना उच्च विद्यालयों के अस्तित्व को स्वीकार किया गया।

इसके अलावा, 1992 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 12326 में दायर श्री एम. के. डी. अग्रवाल द्वारा पुष्टि किए गए दूसरे जवाबी शपथ पत्र में कहा गया था कि क्रम सं. 1 से 116 तक के विद्यालय वे विद्यालय हैं जो प्रस्तावित विद्यालय हैं और जिन्हें स्थापना के लिए अनुमति नहीं दी गई है। हालांकि, तीसरे जवाबी शपथ पत्र में यह कहा गया है:

"(ए) क्रमांक 1 से 116 तक के विद्यालय वर्ष 1984-85 के परियोजना विद्यालय हैं जिन्हें माध्यमिक शिक्षा निदेशक, बुद्ध मार्ग, पटना द्वारा स्थापना की अनुमति नहीं मिली है। इन विद्यालयों का चयन तीन सदस्यीय समिति द्वारा किया गया था, परन्तु पत्र संख्या 142 दिनांक 04.02.1989 के प्रावधानों के अंतर्गत इन्हें माध्यमिक शिक्षा निदेशक द्वारा उद्घाटन की अनुमति नहीं दी गई।

(ख) क्रमांक 117 से 192 तक के विद्यालय वर्ष 1984-85 के परियोजना विद्यालय हैं, जिन्हें विभाग द्वारा राष्ट्रीयकृत उच्च विद्यालयों से शिक्षकों की प्रतिनियुक्ति के आधार पर संचालित किया जा रहा है। कई स्थानों पर विभाग के जिला प्राधिकरणों ने क्लर्क और चौकीदार नियुक्त किए हैं, जिनकी संख्या संबंधित जिलों के डी.ई.ओ. से प्राप्त की जानी है।

(ग) क्रमांक सं. 193 से लेकर 214 तक 1984-85 के वे परियोजना विद्यालय हैं जिनके मामले या तो जांच समिति या सरकार द्वारा विचाराधीन हैं।

(घ) क्रमांक 215 से 230 तक के विद्यालय वर्ष 1984-85 के परियोजना विद्यालय हैं जिनके मामले सरकार द्वारा निस्तारित किए जा चुके हैं। प्रत्येक विद्यालय का पत्र संख्या और दिनांक अनुलग्नक X/2 की तालिका में उल्लेखित है।

पूर्व रूप से अवलोकित तथ्यों से स्पष्ट है कि राज्य के अधिकारियों ने विभिन्न समयों पर विभिन्न रुख अपनाए। तथापि, यह समझना कठिन है कि 300 परियोजना बालिका उच्च विद्यालय कैसे प्रारंभ किए जा सकते हैं, जबकि प्रस्तुत अभिलेखों से यह स्पष्ट है कि तीन सदस्यीय समिति द्वारा कई बालक विद्यालयों का भी मान्यता हेतु चयन किया गया था।

यद्यपि हमारे समक्ष कोई विशेष आपत्ति प्रस्तुत नहीं की गई है, तथापि दिनांक 30.03.2004 के परिपत्र से प्रतीत होता है कि विभिन्न श्रेणियों के विद्यालयों के कर्मचारियों एवं शिक्षकों की नियुक्ति के संबंध में सीबीआई द्वारा जांच की जा रही है। तथापि, हम इस संबंध में कोई टिप्पणी करने का इरादा नहीं रखते।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि जहाँ प्रत्येक पहचाने गए प्रखंड में कम से कम एक बालिका उच्च विद्यालय स्थापित कर महिलाओं में शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया गया था, वहीं व्यवहार में यह रुख बदलकर बालक उच्च विद्यालयों की ओर अग्रसर हो गया।

दूसरी ओर, उच्च न्यायालय के समक्ष तथा हमारे समक्ष भी राज्य का निरंतर रुख यह रहा कि त्रिसदस्यीय समिति का गठन उन विद्यालयों की पहचान करने के उद्देश्य से किया गया था, जो विभिन्न प्रखंडों में स्थित थे। इसके पीछे का सटीक कारण पक्षकारों के बीच विवाद का विषय है, अर्थात् क्या इन्हें केवल मान्यता दी जानी थी या विद्यालयों को पूरी तरह से अधिग्रहित किया जाना था; क्या प्रबंधन निजी हाथों में बना रहता और राज्य केवल शिक्षकों के वेतन का भुगतान करना चाहता था; परियोजना विद्यालय में 5 या 9 पदों की स्वीकृति थी; या क्या ऐसे विद्यालयों का प्रबंधन भी अधिग्रहित किया गया। यह भी ज्ञात नहीं है कि पूर्व विद्यालयों की प्रबंध समिति की संपत्तियाँ किसी न किसी प्रकार से बिहार राज्य में स्थानांतरित हुई या नहीं। यह भी ज्ञात नहीं है कि विद्यालयों की स्थापना में यदि कोई सार्वजनिक भागीदारी रही, तो वह किस हद तक थी; उदाहरणतः विद्यालयों की भूमि किसने दान की; भवनों का निर्माण किसने किया; या ऐसे विद्यालयों की प्रबंध समिति का गठन कैसे किया गया। यदि यह विद्यालयों के अधिग्रहण का मामला है, तो किसी कानून के अभाव में, पूर्व स्वामित्व और/या प्रबंध समिति के अधिकार, स्वत्व और हित बिहार राज्य में हस्तांतरित नहीं हुए।

हमें यह नहीं बताया गया है कि क्या पूर्व विद्यालयों की प्रबंध समिति और जिले के समाहर्ता की अध्यक्षता वाली तीन सदस्यीय समिति के बीच कोई समझौता हुआ था। हम यह भी समझ नहीं पा रहे हैं कि यदि चयन की प्रक्रिया वर्ष 1986 में पूर्ण हुई थी, जैसा कि श्री मिश्रा ने प्रस्तुत किया, तो फिर वर्ष 1984-85 में उन विद्यालयों का अधिग्रहण कैसे किया गया।

सेवाओं का अधिग्रहण या नियमितीकरण :

जहाँ तक परियोजना विद्यालयों के शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मियों की सेवाओं के अधिग्रहण का प्रश्न है, यह भी रहस्यपूर्ण प्रतीत होता है। उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से कहा कि शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मियों की सेवाओं का नियमितीकरण किया गया है। 'नियमितीकरण' शब्द का एक निश्चित अर्थ है। सेवाओं का नियमितीकरण किसी विधायी अधिनियम से पूर्व होना चाहिए, अथवा विधायिका की

अनुपस्थिति में, संविधान के अनुच्छेद 309 में संलग्न उपप्रावधान के अनुसार बनाए गए नियमों के तहत किया जाना चाहिए। [देखें : *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम नीरज अवस्थी*, (2005) (10) स्केल 286]

नियमितीकरण की अवधारणा इस पूर्वधारणा पर आधारित है कि प्रारंभ में नियुक्ति अनियमित रूप से की गई हो, ताकि नियोक्ता इसे नियमित कर सके। इस संबंध में विवाद इस बात के इर्द-गिर्द नहीं है कि निजी विद्यालयों की प्रबंध समिति द्वारा पूर्व में नियुक्त शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मियों की सेवाओं का नियमितीकरण किया जाए। यदि बिहार राज्य की विधान सभा ने ऐसे विद्यालयों का राष्ट्रीयकरण करने हेतु कोई अधिनियम बनाया होता, जैसे कि बिहार गैर-सरकारी प्राथमिक विद्यालय "अधिग्रहण" नियंत्रण अधिनियम, 1976, तो शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मियों की सेवाओं के अधिग्रहण की शर्तें उसमें निर्धारित की जा सकती थीं, ताकि उक्त दिनांक से, जो अधिनियम में निर्दिष्ट होती, शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मी विद्यालय की सभी प्रबंध समितियों की सेवाओं में बने रहने के बजाय सरकारी कर्मचारी बन जाते। इस दृष्टि से, राज्य की कोई नीति निर्णय न होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि शिक्षकों की सेवाओं का अधिग्रहण किया गया, चाहे विद्यालयों की संपत्तियों के साथ किया गया हो या नहीं, ताकि न्यायालय यह निश्चित निष्कर्ष निकाल सके कि शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारी सभी अर्थों में राज्य के कर्मचारी बन गए।

यह एक बात है यह कहना कि विद्यालय का प्रबंधन शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की सेवाओं के साथ अधिग्रहित कर लिया गया है, और यह दूसरी बात है कि राज्य ने विद्यालयों को मान्यता दी है तथा उक्त शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों को उसी पैमाने और वेतन पर वेतन भुगतान करने के लिए बाध्य है जैसा वह अपने स्वयं के शिक्षकों को देता है। विद्यालयों के राष्ट्रीयकरण के मामले में, अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, शिक्षकों की सेवाओं के अधिग्रहण के लिए शैक्षिक, योग्यता और अन्य आवश्यक योग्यताएँ निर्धारित की जातीं। ऐसी किसी विधायिका के अभाव में, राज्य से अपेक्षित था कि वह नीति निर्णय या दिशा-निर्देशों के माध्यम से स्पष्ट रूप से ऐसे मानदंड निर्धारित करे, न केवल शिक्षकों को यह बताने के लिए कि उनकी स्थिति क्या है, बल्कि यह सुनिश्चित करने के लिए भी कि विद्यालयों में ऐसे शिक्षक उपलब्ध हैं जो राज्य द्वारा भुगतान योग्य वेतन और अन्य भत्तों के अधिकारी हैं। यदि नए विद्यालय स्थापित किए गए, तो निस्संदेह उनके शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड के माध्यम से, वर्तमान नियमों और

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के अनुरूप, की जानी थी। अतः यह वह मामला नहीं है जहाँ नियमितीकरण की अवधारणा लागू की जा सकती हो।

तीन सदस्यीय समिति:

अभिलेखों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह स्पष्ट हो कि तीन सदस्यीय समिति का सटीक कार्य क्या था, अर्थात् उन्हें उन विद्यालयों की पहचान करनी थी जो दिनांक 25.09.1981 या 25.01.1985 के परिपत्र में निर्धारित मानदंडों को पूरा करते हों, या क्या उन्हें शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए आवश्यक शैक्षणिक और अन्य योग्यताओं की भी समीक्षा करनी थी। उच्च न्यायालय के समक्ष और हमारे समक्ष शपथ पत्र में किए गए कुछ बयानों को छोड़कर, इस मामले के पक्षकारों ने कोई ऐसा दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया जिससे यह स्पष्ट हो कि निजी विद्यालयों के मान्यता/अधिग्रहण की प्रक्रिया किन शर्तों या नियमों के तहत की गई थी।

जनभागीदारी:

जहाँ तक उन विद्यालयों का प्रश्न है जो सार्वजनिक भागीदारी के माध्यम से स्थापित किए जाने बताए गए, स्थिति उससे भी बेहतर नहीं है। परिपत्र में केवल यह उल्लेख किया गया कि ऐसे विद्यालय सार्वजनिक भागीदारी द्वारा भी स्थापित किए जा सकते हैं, पर यह स्पष्ट नहीं किया गया कि जनता के सदस्यों की भूमिका क्या होगी। क्या उक्त सार्वजनिक भागीदारी का अर्थ भूमि का दान, भवन का निर्माण, या किसी द्वारा बड़ी धनराशि का योगदान था? परिपत्र केवल यह सुझाव देता है कि यदि कुछ व्यक्तियों द्वारा उसमें निर्दिष्ट या अधिक भूमि दान की जाती है, तो विद्यालय का नाम उनके चयन के अनुसार रखा जा सकता है। हमें दिखाई गई विद्यालयों की सूची से यह स्पष्ट होता है कि ऐसे विद्यालय हैं जिनका नाम किसी व्यक्ति के नाम पर रखा गया था। किंतु अधिकांश विद्यालयों को परियोजना विद्यालय के रूप में दर्शाया गया है। यदि कोई विद्यालय परियोजना विद्यालय के रूप में स्थापित किया गया है, पूर्व विद्यालय के नाम के बिना या दाता के चयन के अनुसार विद्यालय के नाम के बिना, तो राज्य की नीति निर्णय के अनुसार अपेक्षित था कि ऐसे विद्यालयों की संख्या बहुत अधिक होती। यह ध्यान देने योग्य है कि बिहार विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत प्रश्नों के उत्तर में शिक्षा निदेशक द्वारा उल्लेखित बड़ी संख्या में विद्यालयों के संबंध में यह टिप्पणी की गई कि कुछ विद्यालयों की पहचान अभी भी करनी शेष है या उनकी पहचान ज्ञात नहीं है, या भवन का निर्माण अभी शेष है। यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जिस स्थिति में भूमि की पहचान

ज्ञात नहीं है या भवन मौजूद नहीं है, वहाँ विद्यालय का अधिग्रहण कैसे किया जा सकता है। इस संदर्भ में, कि तीन सदस्यीय समिति ऐसे विद्यालयों की पहचान कैसे कर सकती थी, यह केवल कल्पना पर ही निर्भर है।

विद्यालयों की संख्या:

कुल 150 विद्यालयों के संबंध में कोई विवाद नहीं है। विभिन्न दस्तावेज़, तथा राज्य की ओर से दायर किए गए शपथपत्र, स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि राज्य द्वारा स्थापित और संचालित विद्यालयों के अतिरिक्त, ऐसे अनेक अन्य विद्यालय भी हैं जिनकी पहचान को लेकर विवाद विद्यमान था।

सरकार ने 75 विद्यालय स्थापित किए थे और तीन-सदस्यीय समिति ने 57 विद्यालयों की पहचान की थी। उक्त विद्यालयों के शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड द्वारा की गई थी, परन्तु प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ तथा पक्षकारों द्वारा शपथपूर्वक दायर शपथ पत्र से यह तथ्य प्रकट होता है कि कुल 300 विद्यालय हैं। हमने पूर्व में कुछ विसंगतियों की ओर संकेत किया है, जिससे यह प्रतीत होता है कि किसी भी पक्ष द्वारा उल्लिखित विद्यालयों की संख्या पूर्णतया सही नहीं हो सकती, किन्तु यह तथ्य निर्विवाद है कि राज्य के अधिकारियों ने स्वयं मंत्रिमंडल के समक्ष यह प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था कि 300 विद्यालय अस्तित्व में हैं। इसी आधार पर मंत्रिमंडल ने 1200 अतिरिक्त पदों को स्वीकृति प्रदान की।

दिनांक 23.02.1985 का परिपत्र:

उक्त परिपत्र से यह स्पष्ट होता है कि सरकार ने 300 चयनित प्रखंडों में से प्रत्येक 700 प्रखंडों में 75 कन्या उच्च विद्यालयों का चयन किया था। इसकी एक विवरण/सूची भी उसके साथ संलग्न थी। उत्तरदाता के अनुसार, इस श्रेणी में भी ऐसे दोनों प्रकार के विद्यालय सम्मिलित थे—वे जिन्हें सरकार ने अधिग्रहित कर लिया था या चयनित किया था, तथा वे जिन्हें परियोजना विद्यालय के रूप में स्थापित किए जाने का प्रस्ताव था। उक्त पत्र में यह भी उल्लेख है कि शेष प्रखंडों में विद्यालयों के चयन हेतु, तथा वहाँ जहाँ विद्यालय सरकार द्वारा स्थापित नहीं किए गए थे, भवन निर्माण के उद्देश्य से स्थल चयन करने के लिए तीन-सदस्यीय समितियाँ गठित की गई हैं। उक्त पत्र के अनुच्छेद 2 में इसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया और विधि निर्धारित की गई है। इसके साथ संलग्न परिशिष्ट में विद्यालयों के नाम तथा तीन-सदस्यीय समिति की मान्यता की तिथियाँ उल्लिखित हैं।

दिनांक 4.2.1989 का परिपत्र:

हमने यह उल्लेख किया है कि वर्ष 1982-83 और 1983-84 में किसी भी विद्यालय को न तो मान्यता प्रदान की गई और न ही कोई विद्यालय स्थापित किया गया। हमने यह भी पूर्व में नोट किया है कि मान्यता प्रदान किए जाने की एक शर्त यह थी कि शिक्षकों की नियुक्ति विद्यालय सेवा बोर्ड द्वारा की जानी आवश्यक थी। उपर्युक्त संदर्भ में, दिनांक 4.2.1989 के पत्र पर इस वाद/मामले के प्रयोजन हेतु विचार किया जाना आवश्यक है।

जहाँ राज्य द्वारा स्थापित विद्यालयों के लिए 9 पद स्वीकृत किए गए थे, वहीं तीन-सदस्यीय समिति के माध्यम से चयनित या अधिग्रहित कर मान्यता हेतु चुने गए विद्यालयों के लिए केवल 5 पद ही स्वीकृत किए गए। यह विवादित नहीं है कि संबंधित उच्च विद्यालयों में कक्षा 6 से 10 तक, अर्थात् कुल पाँच कक्षाओं के विद्यार्थियों को शिक्षण प्रदान किया जाता है। यह तथ्य भी विवादित नहीं है कि प्रत्येक विषय को तीन समूहों—अर्थात् भाषा समूह, मानविकी समूह तथा विज्ञान समूह—में वर्गीकृत किया गया था, और उसी के अनुसार अन्य शिक्षकों की नियुक्ति की जानी थी।

निस्संदेह राज्य को यह अधिकार है कि वह योग्यता निर्धारित करे अथवा आवश्यक पदों की संख्या को स्वीकृति दे। राज्य, उपयुक्त परिस्थितियों में, उन योग्यताओं में शिथिलता प्रदान कर सकता है या ऐसे नियम एवं शर्तें निर्धारित कर सकता है जिन्हें वह उचित और उपयुक्त समझे। यह भी राज्य के अधिकार क्षेत्र में है कि वह एक चयन समिति का गठन करे ताकि यह जाँचा जा सके कि शिक्षक निर्धारित मानदंडों को पूरा करते हैं या नहीं। राज्य को ऐसे शिक्षकों की आयु-सीमा निर्धारित करने का अधिकार भी प्राप्त है। कितने शिक्षकों की नियुक्ति आवश्यक है तथा शिक्षकीय एवं गैर-शिक्षकीय कर्मचारियों की संख्या क्या होगी — यह सब राज्य की नीतिगत निर्णयाधिकार की विषयवस्तु है। निःसंदेह, यदि इस संदर्भ में किसी प्राधिकारी को अधिकार है, तो वह बिहार वरिष्ठ विद्यालय शिक्षा बोर्ड है, जो एक वैधानिक प्राधिकरण है और जिसे इन विद्यालयों की मान्यता हेतु मानदंड निर्धारित करने का वैधानिक दायित्व सौंपा गया है। परन्तु वस्तुतः, यह मुद्दा अब अकादमिक हो चुका है। क्योंकि राज्य ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि यदि प्रत्येक विद्यालय में केवल 5 पद ही स्वीकृत किए जाएँ, तो विद्यालयों को गंभीर कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। मंत्रिमंडल ने स्वयं यह अनुभव किया कि जैसे सरकार द्वारा संचालित किसी भी विद्यालय में न्यूनतम 9 शिक्षक आवश्यक होते हैं, उसी प्रकार परियोजना विद्यालयों में भी कम से कम 9 शिक्षकों की

आवश्यकता है। ऐसे विद्यालयों के लिए शिक्षकों की संख्या न केवल स्वीकृत की गई, बल्कि उसकी स्वीकृति पूर्वव्यापी प्रभाव और प्रतिगामी संचालन के साथ प्रदान की गई। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक धनराशि भी आवंटित की गई। अतः यद्यपि मानदंड निर्धारित करना राज्य का विशेषाधिकार था, फिर भी राज्य ने स्वयं मानदंड निर्धारित कर दिए हैं। इसलिए उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि राज्य प्रत्येक विद्यालय में कम से कम 9 शिक्षकों को मान्यता देने के लिए बाध्य था—अब व्यावहारिक दृष्टि से और सभी प्रयोजनों के लिए—केवल एक अकादमिक प्रश्न रह गया है।

यह भी विवादित नहीं है कि राज्य ने पहली बार अपने दिनांक 04.02.1989 के पत्र में शिक्षकों की योग्यताओं के साथ-साथ उनकी संख्या को भी निर्धारित किया था।

दिनांक 04.02.1989 के उक्त सरकारी आदेश की वैधता तथा/या विधिक संस्तुति को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी। उच्च न्यायालय ने, जैसा कि उपर्युक्त रूप में उल्लेखित है, यह कहते हुए उक्त निर्देशों को अपास्त कर दिया कि प्रत्येक विद्यालय में 9 शिक्षकों की नियुक्ति आवश्यक है। उच्च न्यायालय के आदेश का यह भाग विस्तृत विचार की आवश्यकता नहीं रखता, क्योंकि राज्य सरकार ने अब पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ 4 अतिरिक्त पदों को स्वीकृति प्रदान कर दी है।

विचलन:

यद्यपि, मूल योजना के क्रियान्वयन में द्वितीय चरण के संबंध में विचलन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। दिनांक 27.05.1981 के परिपत्र को समग्र रूप से पढ़ा जाना आवश्यक है। उक्त परिपत्र के अनुसार समस्त राज्य में, जिसमें छोटानागपुर एवं संथाल परगना—जो अब झारखंड राज्य का भाग है—भी सम्मिलित हैं, कुल 650 विद्यालय स्थापित किए जाने थे। इसमें स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि नए उच्च विद्यालयों की स्थापना के प्रस्ताव तैयार करते समय उन उच्च विद्यालयों को प्राथमिकता दी जाएगी जिन्हें प्रस्तावित उच्च विद्यालयों के रूप में स्थापना की अनुमति प्रदान की गई थी, और यह प्रयास किया जाएगा कि ऐसे विद्यालयों द्वारा मान्यता संबंधी सभी शर्तें पूर्ण कर ली जाएँ। हालाँकि, जिस बात पर विशेष बल दिया गया था, वह यह थी कि प्राथमिकता केवल उन विद्यालयों को दी जाएगी जिन्हें पूर्व अनुमति प्राप्त थी, न कि उन विद्यालयों को जो पहले से संचालित हो रहे थे। यदि विद्यालय पहले से ही संचालित हो रहे हों और उनकी संख्या राज्य द्वारा स्थापित किए जाने वाले विद्यालयों की संख्या से अधिक हो, तो अधिक विद्यालय स्थापित करने का उद्देश्य ही

विफल हो जाता। इसी दृष्टि से राज्य ने उन विद्यालयों को मान्यता प्रदान करने पर विचार किया जो अभी स्थापित होने थे, परंतु जहाँ स्थानीय संसाधन—जैसे भूमि, भवन इत्यादि—उपलब्ध हों, जिससे राज्य पर व्यय न्यूनतम हो। किन्तु यदि ऐसे विद्यालय, जिन्हें स्थापना हेतु पूर्व अनुमति प्राप्त थी, उपलब्ध न हों, तो जिला शिक्षा पदाधिकारी को ऐसे स्थान चुनने के लिए कहा गया जहाँ सरकारी भूमि आसानी से उपलब्ध हो, ताकि भूमि क्रय/अधिग्रहण पर होने वाले व्यय की बचत की जा सके।

उक्त पत्र के कंडिका 11 पर यह दिखाने के लिए अवलम्बन व्यक्त की गई है कि सरकार का उद्देश्य मौजूदा उच्च विद्यालयों को अपने नियंत्रण में लेना था। उक्त कंडिका में 15 जिलों में 33 कन्या उच्च विद्यालय स्थापित करने का प्रावधान किया गया है, जहाँ कम से कम 4 बालक उच्च विद्यालय संचालित हो रहे हैं। वाक्य “उपरोक्त उच्च विद्यालयों का चयन जिला शिक्षा अधिकारियों द्वारा कंडिका 4 में वर्णित अनुसार किया जाएगा” का यह अर्थ नहीं है कि पहले से संचालित कुछ विद्यालयों को अधिग्रहित करना आवश्यक था। राज्य की निर्धारित नीति से विचलन वर्ष 1982 में आरंभ हुआ। दिनांक 12.10.1982 के पत्र को स्पष्ट रूप से समझना कठिन प्रतीत होता है। जहाँ विद्यालय भवन, शिक्षण उपकरण, अध्ययन सामग्री और स्थापना लागत हेतु 1.5 करोड़ रुपये स्वीकृत किए गए थे, परन्तु यह समझ से परे है कि जिला शिक्षा अधिकारियों को इन विद्यालयों का निरीक्षण करने और औपचारिक रूप से उनके प्रबंधन एवं नियंत्रण को अपने कब्जे में लेने हेतु अधिसूचना जारी करने का निर्देश कैसे दिया गया, जिससे ये अधिकार राज्य सरकार में हस्तांतरित हो जाएँ। उक्त कंडिका मुख्य कंडिका के अनुरूप प्रतीत नहीं होता, क्योंकि उसके अनुसार राज्य सरकार का उद्देश्य टीएसपी क्षेत्र में 78 विद्यालय और गैर-सब-योजना क्षेत्र में 72 विद्यालय खोलना था। उक्त परिपत्र के अन्य भाग भी पहले कंडिका के अनुरूप नहीं हैं, परंतु कंडिका 2, 5 और 10 यदि संयुक्त रूप से पढ़े जाएँ, तो ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार कुछ विद्यालयों को मान्यता देने का भी इरादा रखती थी। उक्त पत्र का कंडिका 10 दो भागों में विभक्त है: (i) नियमित शिक्षक नियुक्त करने में अनावश्यक विलंब से बचने के लिए संविदा/अल्पकालिक शिक्षक नियुक्त किए जाएँगे; तथा (ii) विद्यालय की पूर्व प्रबंधन समिति द्वारा नियुक्त शिक्षकों का इंटरव्यू आर. डी. ई. की अध्यक्षता वाली समिति द्वारा विज्ञापन के बिना लिया जाएगा, जिसका अर्थ है कि ऐसे शिक्षक भी संविदा/अल्पकालिक आधार पर नियुक्त किए जा सकते हैं।

हम, तथापि, यह समझने में असमर्थ हैं कि उक्त परिपत्र के कारण राज्य द्वारा अपनाए गए नीतिगत निर्णय से विचलन कैसे संभव हो सकता है; परन्तु हमारे द्वारा प्रस्तावित आदेश को दृष्टिगत रखते हुए, इस स्तर पर आगे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

अधिग्रहण:

“अधिग्रहण” शब्द का अर्थ यह होगा कि सरकार ने विद्यालयों की संपत्ति और परिसंपत्तियों के साथ-साथ शिक्षकीय और गैर-शिक्षकीय कर्मचारियों को भी अपने अधीन लेने का विचार किया था। राज्य की नीतिगत निर्णय के संदर्भ में विद्यालयों का अधिग्रहण पूर्ण रूप से विद्यालय के प्रबंधन या नियंत्रण को लेने के इरादे का संकेत प्रतीत नहीं होता। यदि पूर्व दृष्टि से ऐसे विद्यालयों का अधिग्रहण किया जाता, तो यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए का उल्लंघन होता। अनुच्छेद 300-ए “सर्वोपरि अधिकार सिद्धांत” को समाहित करता है, जो दो भागों में विभक्त है: (i) सार्वजनिक हित में संपत्ति का अधिग्रहण; और (ii) इसके लिए उचित मुआवजा भुगतान।

जिलुभाई नानभाई खाचर, (उपरोक्त) में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

“सर्वोपरि अधिकार सिद्धांत वह अधिकार है जो संप्रभु राज्य को अपने नियमित साधनों के माध्यम से प्राप्त होता है, ताकि वह किसी भी राज्य की भूमि के हिस्से, जिसमें निजी संपत्ति भी शामिल है, को अस्थायी या स्थायी रूप से अपने नियंत्रण में लेने का अधिकार रखे, भले ही उसके मालिक की सहमति न हो, यदि सार्वजनिक आवश्यकता और लोकहित के लिए ऐसा आवश्यक हो। उच्च अधिकार संपत्ति सिद्धांत संपत्ति का सर्वोच्च और सबसे सटीक विचार प्रस्तुत करता है, जो सरकार या संप्रभु क्षमता में जनता के समूह के पास रहता है। यह संविधान और राज्य के कानूनों द्वारा निर्देशित तरीके से, जब भी सार्वजनिक हित की आवश्यकता हो, संपत्ति पर पुनः कब्जा करने का अधिकार प्रदान करता है। शब्द 'स्वामित्वहरण' व्यवहार में 'सर्वोपरि अधिकार' के पर्यायवाची है।”

विशंभर दयाल (उपरोक्त) में इस न्यायालय ने निर्णय किया कि आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 3 के तहत किए गए आदेश के संदर्भ में खाद्य पदार्थों की जब्ती भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए से प्रभावित नहीं होगी, लेकिन न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 162 के तहत निम्नलिखित शब्दों में ऐसा कोई कदम नहीं उठाया जा सकता था:

अभी भी यह प्रश्न शेष है कि क्या गेहूँ की जब्ती बिना कानून के अधिकार के संपत्ति से वंचित करने के बराबर है। अनुच्छेद 300- ए यह प्रावधान करता है कि किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से केवल कानून के अधिकार के अंतर्गत ही वंचित किया जा सकता है। राज्य सरकार अनुच्छेद 162 के अंतर्गत राज्य की कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करते हुए किसी व्यक्ति की संपत्ति से उसे वंचित नहीं कर सकती। ऐसा अधिकार केवल कानून के अधिकार द्वारा ही प्रयोग किया जा सकता है, और केवल कार्यकारी आदेश या अधिसूचना से नहीं। जैसा कि अनुच्छेद 162 के प्रारंभिक शब्दों से स्पष्ट है, यह संविधान के अन्य प्रावधानों के अधीन है। इसलिए यह आवश्यक रूप से अनुच्छेद 300-ए के अधीन है। अनुच्छेद 300-ए के संदर्भ में "कानून" शब्द का अर्थ संसद या राज्य विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियम, नियम, या ऐसा वैधानिक आदेश है जिसमें कानून का बल हो, अर्थात् सकारात्मक या राज्य निर्मित कानून।

ठाकुर भारत सिंह (उपरोक्त) वाद में, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से निर्णय किया कि राज्य या उसके अधिकारी कार्यकारी अधिकार का प्रयोग करते हुए नागरिकों के अधिकारों का उल्लंघन केवल इसलिए नहीं कर सकते हैं क्योंकि राज्य के विधानमंडल को उस विषय के संबंध में कानून बनाने की शक्ति है जिस पर कार्यकारी आदेश पारित किया जाता है।

किसी संस्था का प्रबंधन करने का अधिकार भी संपत्ति का अधिकार है। टी. एम. ए. पाई फाउंडेशन और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य [(2002) 8 एस.सी.सी. 481] में इस न्यायालय की ग्यारह-सदस्यीय पीठ के निर्णय के अनुसार, किसी शैक्षिक संस्था की स्थापना और प्रबंधन को मौलिक अधिकार का हिस्सा माना गया है, क्योंकि यह अनुच्छेद 19(1)(जी) के अंतर्गत अधिकार-व्यवसाय का हिस्सा है। किसी नागरिक को उक्त अधिकार से केवल कानून के अनुसार ही वंचित किया जा सकता है। अनुच्छेद 19(6) के उद्देश्य के लिए कानून की आवश्यकता को किसी भी परिस्थिति में अनुच्छेद 162 के तहत जारी परिपत्र या नीति निर्णय द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता। ऐसा कानून, जैसा कि स्थापित है, केवल विधानमंडल द्वारा पारित किया गया होना चाहिए।

राय साहिब राम जवाया कपूर और अन्य बनाम पंजाब राज्य [(1955) 2 एस.सी.आर. 225], जिस पर श्री मिश्रा ने निर्भरता व्यक्त की, में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया:

" वास्तव में, कार्यपालिका उस समय विभागीय या अधीनस्थ कानून बनाने के अधिकार का प्रयोग कर सकती है, जब यह अधिकार विधानमंडल द्वारा उसे सौंपा गया

हो। इसके अतिरिक्त, जब ऐसा अधिकार प्रदान किया गया हो, तो यह न्यायिक कार्य भी सीमित रूप में संपन्न कर सकती है। तथापि, कार्यकारी सरकार कभी भी संविधान या किसी भी कानून के प्रावधानों के विपरीत कार्य नहीं कर सकती। यह संविधान के अनुच्छेद 154 के प्रावधानों से स्पष्ट है। परन्तु, जैसा कि हमने पहले ही कहा है, इससे यह नहीं निष्कर्षित किया जा सकता कि कार्यपालिका को कार्य करने के लिए पहले से ही कोई कानून मौजूद होना आवश्यक है और कार्यपालिका के अधिकार केवल इन कानूनों के पालन तक सीमित हैं।

तथापि, *ठाकुर भारत सिंह (उपर्युक्त)* वाद में इस न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय को यह कहते हुए अलग किया गया था कि जिस कार्यकारी कार्रवाई को बरकरार रखा गया था, वह हालांकि विधान द्वारा समर्थित नहीं थी, लेकिन यह किसी भी नागरिक के पूर्वाग्रह के लिए काम नहीं करती थी। यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया था:

" सभी कार्यकारी क्रियाएँ, जो किसी व्यक्ति के हितों के विपरीत कार्य करती हैं, उन्हें समर्थन देने के लिए कानून का अधिकार प्राप्त होना आवश्यक है, और अनुच्छेद 358 के प्रावधान उस नियम से किसी प्रकार छूट नहीं देते। अनुच्छेद 358 स्पष्ट रूप से राज्य को विधायी या कार्यकारी कार्रवाई करने का अधिकार प्रदान करता है, बशर्ते ऐसी कार्रवाई राज्य के लिए सक्षम हो, यदि संविधान के भाग III के प्रावधान न होते। अनुच्छेद 358 राज्य को नागरिकों और अन्य के हितों के विपरीत मनमाना अधिकार प्रदान करने का प्रयोजन नहीं रखता; यह केवल यह सुनिश्चित करता है कि जब तक आपातकाल का उद्घोषण अस्तित्व में है, कानून बनाए जा सकते हैं और वैध अधिकार के अनुसार विशिष्ट कार्रवाई की जा सकती है, जो यदि अनुच्छेद 19 के प्रावधान लागू होते तो अमान्य होती। हमारी संघीय संरचना कुछ मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है: (1) जनता की संप्रभुता के साथ सीमित सरकारी अधिकार, अर्थात् सरकार को जनता की अधिकांश इच्छा के अनुसार संचालित किया जाना चाहिए। जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से स्वयं शासन करती है, जबकि कार्यकारी सरकार की आधिकारिक एजेंसियों के पास केवल वही अधिकार हैं जो जनता ने उन्हें प्रदान किए हैं। (2) राज्य के तीन अंगों—विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका—के बीच अधिकारों का वितरण, प्रत्येक अंग के पास प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्य अंग पर कुछ नियंत्रण होता है। (3) कानून का शासन, जिसमें मनमानी कार्यकारी कार्रवाई की न्यायिक समीक्षा शामिल है।

भारत संघ और अन्य बनाम मेसर्स ग्राफिक इंडस्ट्रीज कं. और अन्य, जे. टी. (1994) 5 एस. सी. 237 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी प्राधिकारी द्वारा निजी व्यक्तियों को लिखा गया पत्र वैध अपेक्षा को जन्म नहीं दे सकता है।

इसलिए, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि 'अधिग्रहण' शब्द का उपयोग शिथिल रूप से किया गया है। यह अच्छी तरह से तय है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 162 और 166 के अनिवार्य प्रावधानों को पूरा किए बिना राज्य के एक अधिकारी द्वारा जारी एक परिपत्र को किसी राज्य द्वारा निर्णय के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। [देखें : श्री द्वारका नाथ तिवारी और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, ए.आई.आर. (1959) एससी 249।

यदि उक्त परिपत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 162 की आवश्यकता को पूरा नहीं करता है, तो इस अर्थ में एक वैध अधिग्रहण का सवाल नहीं उठता है कि संपत्तियां और/या उनका प्रबंधन बिहार राज्य में निहित होगा। इसके अलावा, जिला शिक्षा अधिकारी को औपचारिक रूप से प्रबंधन और नियंत्रण को संभालने और इसे राज्य सरकार को सौंपने के लिए अधिसूचना जारी करने का अधिकार नहीं है। किसी भी स्थिति में, यदि शिक्षकों को उसमें निर्धारित तरीके से नियुक्त करने की आवश्यकता होती है, तो यह किसी की समझ से परे है कि विद्यालय के प्रबंधन को शिक्षण और गैर-शिक्षण, कर्मचारियों के साथ कैसे लिया जाता है जो पहले से ही उसमें काम कर रहे थे।

निष्कर्ष:

भले ही विद्यालयों की संख्या के संबंध में कोई विवाद न हो, राज्य द्वारा लिए गए रुख को देखते हुए और विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अभिलेखों से यह प्रतीत होता है कि विद्यालय की मान्यता, यदि कोई हो, तो कुछ विद्यालयों को गलत तरीके से दी गई थी जहां भवन भी पूरे नहीं हुए थे या चयन की प्रक्रिया भी समाप्त नहीं हुई थी, राज्य के लिए इस मामले में आगे देखना आवश्यक हो सकता है।

इसके अलावा इस बात की जांच करना आवश्यक है कि उक्त उद्देश्य के लिए नियुक्त शिक्षक और गैर-शिक्षक कर्मचारी राज्य के नीतिगत निर्णय के संदर्भ में मानदंडों को पूरा करते हैं या नहीं। अनुमति प्राप्त करने के उद्देश्य से अन्य प्रासंगिक कानूनों के तहत निर्धारित उनकी योग्यताओं की भी जांच की जानी चाहिए।

हमें उत्तरदाता के पक्ष में प्रस्तुत किए गए तर्क में कोई योग्यता प्रतीत नहीं होती कि समान्य विबंध का सिद्धांत बिहार राज्य के विरुद्ध लागू होगा। यह अब अच्छी तरह से स्थापित है कि संवैधानिक प्रावधान या किसी अधिनियम से संबंधित विवाद में विबंध का नियम लागू नहीं होता। भारत के संवैधानिक ढांचे के तहत अपनी कार्रवाईयों को अमान्य ठहराने के संबंध में राज्य का प्रश्न उठाने का अधिकार अब मान्यता प्राप्त है। यदि किसी संवैधानिक प्रावधान के कारण किसी कार्रवाई का समर्थन नहीं किया जा सकता या राज्य किसी नीति निर्णय को वापस लेना या संशोधित करना चाहता है, तो इस पर कोई अपवाद नहीं लगाया जा सकता। यह एक बात है कि ऐसी कार्रवाई का मूल्यांकन करते समय नागरिक के मौलिक अधिकारों को ध्यान में रखा जाना चाहिए, लेकिन यह दूसरी बात है कि विबंध का नियम लागू करके राज्य को उक्त प्रश्न उठाने से पूर्ण रूप से रोका जा सके। जहाँ तक दिनांक 18.02.1989 के आक्षेपित परिपत्र का संबंध है, हमारे विचार में राज्य के पास इसे संवैधानिक ढांचे के अनुसार वैधता प्रदान करने का अधिकार है।

यह कहने के बाद, हमें यह अवलोकन करना आवश्यक है कि अंतिम निर्णय राज्य के हाथ में होना चाहिए। दिनांक 25.01.2000 के मंत्रिपरिषद् के निर्णय के अनुसार, कुल 300 विद्यालयों को मान्यता दी गई बताई गई है। तथापि, हमें इस बात पर संदेह है कि क्या सभी सटीक तथ्यों को कैबिनेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया या नहीं, विशेष रूप से इस तथ्य के मद्देनजर कि छोटानागपुर और संथाल परगना में स्थापित कई विद्यालय अब झारखंड राज्य में हैं। हमने इस विषय पर विचार किया है, लेकिन हमें यह सुनिश्चित नहीं है कि उन विद्यालयों के अलावा, जिन्हें तीन-सदस्यीय समिति द्वारा पहचाना गया और जिन्हें राज्य ने स्वीकार कर लिया, क्या शेष विद्यालयों के मान्यता या अन्यथा निर्णय के संबंध में किसी उपयुक्त प्राधिकरण द्वारा कोई अंतिम निर्णय लिया गया था।

उक्त उद्देश्य के लिए, हमारी राय है कि उक्त उद्देश्य के लिए एक समिति का गठन किया जाना चाहिए।

अतः, बिहार राज्य के मुख्य सचिव से अनुरोध किया जाता है कि वह एक समिति का गठन करें, जिसमें दो अधिकारी और एक प्रतिष्ठित शिक्षाविद् और/या सेवानिवृत्त न्यायिक अधिकारी शामिल हों। यदि समिति के सदस्य के रूप में कोई न्यायिक अधिकारी नियुक्त किया जाता है, तो वह समिति के अध्यक्ष होंगे। न्यायिक अधिकारी और/या शिक्षाविद् का वेतन आपसी सहमति से निर्धारित किया जाएगा।

मुख्य सचिव से यह अनुरोध किया जाता है कि वे समिति के उपयोग हेतु आवश्यक कर्मचारियों की व्यवस्था करें, जो समिति को आवश्यक हों, और जिन्हें राज्य के किसी एक या अन्य विभाग के कर्मचारियों में से उपलब्ध कराया जा सके।

यदि यह पाया जाता है कि शिक्षकों की नियुक्ति तदर्थ आधार पर की गई है, तो विद्यालय सेवा बोर्ड को कानून के अनुसार सख्ती से नियमित भर्ती करने का निर्देश दिया जाएगा।

शिक्षा के सभी संबंधित क्षेत्रीय उप निदेशकों को भी समिति के समक्ष चार सप्ताह के भीतर परियोजना विद्यालयों के संबंध में अपनी प्रतिवेदन प्रस्तुत करनी चाहिए।

समिति अपीलकर्ताओं के ऐसे सभी व्यक्तिगत मामलों पर भी विचार करेगी, जैसा कि उच्च न्यायालय के फैसले के कंडिका 35 में निर्देश दिया गया है।

मान्यता का दावा करने वाले या कोई अन्य दावा करने वाले सभी शैक्षणिक संस्थान तारीख से तीन सप्ताह के भीतर सभी सहायक दस्तावेजों के साथ अपने अभ्यावेदन दाखिल करेंगे। अपने आवेदनों में, संस्थानों को प्रत्येक वर्ग में वर्षवार प्रवेश लेने वाले छात्रों का विवरण भी देना होगा।

हालांकि अभिलेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि लगभग 300 विद्यालयों ने अपने दावों को मान्यता दे दी है, जो मंत्रिमंडल के निर्णय से भी स्पष्ट है, हमारी राय है कि इस सवाल पर नए सिरे से विचार किया जाना चाहिए कि कितने विद्यालय राज्य सरकार द्वारा निर्धारित मानदंडों को पूरा करते हैं।

चूँकि समिति के गठन में कुछ समय लग सकता है, ऐसे दावे शिक्षा सचिव के कार्यालय में दायर किए जा सकते हैं, जो इस संबंध में एक उपयुक्त प्रकोष्ठ खोलेगा। यह समिति संस्थानों और/या शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों के दावों की जांच करने के बाद तीन महीने के भीतर मुख्य सचिव के समक्ष एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगी।

मुख्य सचिव से अनुरोध है कि वह उक्त प्रतिवेदन को अपनी टिप्पणियों के साथ कार्यकारी कार्य के नियमों के संदर्भ में उपयुक्त प्राधिकारी के समक्ष रखे और यह उम्मीद की जाती है कि बिहार सरकार का उक्त प्राधिकारी तारीख से चार महीने के भीतर उस पर उचित निर्णय लेगा।

हम सराहना करेंगे, यदि राज्य सरकार उन लोगों के खिलाफ उपयुक्त कार्रवाई करती है जो कानून के अनुसार सरकारी योजना के कार्यान्वयन की प्रक्रिया में अनियमितताओं और/या अवैधताओं के लिए जिम्मेदार पाए जा सकते हैं।

जहां तक शिक्षण और गैर-शिक्षण कर्मचारियों की न्यूनतम आयु का संबंध है, निर्विवाद रूप से यह 18 वर्ष होनी चाहिए।

जहाँ तक शिक्षण कर्मचारियों की शैक्षणिक योग्यता का प्रश्न है, हमारा मत है कि यह देखते हुए कि सीमित संख्या में शिक्षकों को नियुक्त किया जाना था ताकि विशेष रूप से कन्याओं में गांवों में साक्षरता फैलाने के संवैधानिक उद्देश्य को पूरा किया जा सके, शहरी क्षेत्रों में स्थित जिला विद्यालयों या सरकारी विद्यालयों में अपनाए गए मानक पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए, जैसा कि उच्च न्यायालय ने अवलोकन किया था। फिर भी, यह देखते हुए कि यह मूलतः एक सरकारी कार्य है, प्रश्न यह है कि क्या कुछ शिक्षक जिनके पास बी. टी. प्रशिक्षण या शारीरिक शिक्षा का प्रशिक्षण है, उन्हें उक्त उक्त परियोजना में जारी रहने की अनुमति दी जाएगी या नहीं, यह निर्णय राज्य के अधिकार क्षेत्र में छोड़ा जाता है, जिसके लिए कानून के अनुसार निर्णय लिया जा सकता है।

इन अपीलों का निस्तारण उपरोक्त टिप्पणियों और निर्देशों के साथ किया जाता है। वाद के तथ्यों और परिस्थितियों में, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

आर.पी.

अपील निस्तारित की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।